वर्ष : 2, अंक : 8 अक्टूबर-दिसम्बर 2018

हिन्दुस्तानी भाषा भारती

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

विशेष :

नेपाली भाषा साहित्य और हिन्दी की स्थिति

वर्ष : 2, अंक : 8

हिन्दुस्तानी भाषा भारती

मूल्य : 30 रुपये

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

सम्पादक

सुधाकर बाबू पाठक

कार्यकारी सम्पादक : **डॉ. रमेश तिवारी**

प्रबन्ध सम्पादक : **सविता चड्ढा**

सह सम्पादक : **विजय कुमार शर्मा**

: **सागर समीप**

उप सम्पादक : **डॉ. बीना राघव**

प्रवक्ता : **बृजेश द्विवेदी**

कानूनी सलाहकार : **अमरनाथ गिरि**

वित्तीय सलाहकार : **राम सिंह मेहता**

: **नीरज शर्मा**

सम्पादकीय सहयोग

सुरेखा शर्मा, सरोज शर्मा, सीमा सिंह, डॉ. विदुषी शर्मा

पत्रिका प्रसार एवं प्रबंधन

हामिद खान, भूपिंद्र सेठी, राजकुमार 'श्रेष्ठ'

कार्यालय :

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

3675, राजा पार्क, रानी बाग, दिल्ली-110034

ई-मेल : info@hindustanibhashaakadami.com
hindustanibhashabharati@gmail.com

वेबसाइट : www.hindustanibhashaakadami.com

सम्पर्क सूत्र : 09873556781, 09968097816

- पत्रिका में प्रकाशित लेखों में लेखकों के अपने विचार हैं। प्रकाशक का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।
- सभी विवादों का निपटारा दिल्ली/नई दिल्ली की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों और फोरमों में ही किया जाएगा।
- सम्पादन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक और अव्यावसायिक है।

प्रकाशक, सम्पादक व मुद्रक सुधाकर बाबू पाठक द्वारा स्वामी हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी ट्रस्ट, 3675, राजा पार्क, शकूर बस्ती, दिल्ली-110034 के लिए प्रकाशित और सन्नी प्रिन्टर्स, बी-234, नारायणा इन्डस्ट्रियल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028 से मुद्रित।

विषय सूची

अतिथि सम्पादकीय : मनप्रसाद सुब्बा 04

सम्पादकीय : सुधाकर पाठक 05

साक्षात्कार : गंगा प्रसाद उप्रेती 06

चमत्कार लोक भाषाओं का : राजकुमार श्रेष्ठ 08

विश्वभाषा हिन्दी देश में अपना स्थान प्राप्त करके रहेगी- डॉ. गार्गीशरण मिश्र 12

इसलिए विदा करना चाहते हैं, हिन्दी को हिन्दी के कुछ अखबार- प्रभु जोशी 14

नेपाल में हिन्दी का अस्तित्व विगत से वर्तमान तक- डॉ. श्वेता दीप्ति 23

अनुवाद का अनुभव- भीष्म उप्रेती 26

क्रांतिकारी कवि त्रिलोचन और युद्ध प्रसाद- पूनम झा 29

स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा-चिन्तन- सुरेन्द्र माहेश्वरी 30

भाषाई संगम का सुनहरा सपना- अनन्त विजय 32

हिन्दी से कटना, अपनी जड़ों से कटना- डॉ. बीना राघव 34

विविध भाषाओं के विकास और संचार प्रवाह में रेडियो..- डॉ. नवराज लम्साल 36

हिन्दी भाषा के प्रति घटता रुझान और मूल्य विघटन- डॉ. उर्मिला मिश्रा 39

अकादमी की साहित्यिक गतिविधियाँ

शिक्षक प्रकोष्ठ-गुरुग्राम द्वारा मेधावी छात्र एवं शिक्षक समारोह 42

"गाँधी के भाषा चिन्तन में हिन्दी" 43

मेधावी छात्र एवं शिक्षक समारोह 44

रिपोर्ट

सार्क साहित्य सम्मेलन के नेपाली प्रतिनिधि मण्डल की इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, नई दिल्ली में शिष्टाचार भेंट 45

सार्क साहित्य सम्मेलन के नेपाली प्रतिनिधि मण्डल की केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली में शिष्टाचार भेंट 46

मेधावी छात्र सम्मान की लड़ी की कड़ी में-डॉ. आरती 'लोकेश' गोयल 47

आगामी आयोजन

पुस्तक परिचर्चा एवं लोकार्पण समारोह 48

मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह 49

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान 50

अतिथि सम्पादकीय

नेपाली पाठकों के लिए दूसरी सम्पर्क भाषा जैसी है हिन्दी

मनप्रसाद सुब्बा
अतिथि सम्पादक

नेपाली भाषा और हिन्दी भाषा एक-आपस में सिर्फ सामीप्य ही नहीं बल्कि सगे भाई -बहन का रिश्ता भी रखते हैं । हम सभी जानते हैं कि दोनों भाषाओं के पूर्वज एक ही है । लेकिन सदियों के विकासक्रम के दौरान दोनों भाषाओं ने अपने-अपने चरित्र विकसित करते हुए अलग-अलग पहचान बना ली है। नेपाल की उत्तरी और पूर्वी सीमा तिब्बती-बर्मी भाषा के प्रभुत्व वाले देशों से होने के कारण उन भाषाओं का प्रभाव भी नेपाली भाषा पर पड़ना स्वभाविक ही है । आधुनिक नेपाल के अंदर भी अनेकों जाति-जनजातियों की भाषा अधिकतर तिब्बती-बर्मी मूल की ही है । सत्रवीं शताब्दी में जब पृथ्वीनारायण शाह ने राज्य विस्तार का ऐतिहासिक अभियान चलाया तो नेपाली भाषा भी विजीत जाति-जनजातियों की भाषाओं के सम्पर्क में आकर प्रभावित हुए बगैर नहीं रह सकी ।

आज नेपाली भाषा की अपनी एक विशिष्ट पहचान ही नहीं बल्कि विश्व की उन्नत और समृद्ध भाषाओं में नेपाली भाषा को भी एक माना जाता है । इस भाषा में लिखे हुए साहित्य के भण्डार को कतई कम नहीं कहा जा सकता । पिछले सौ सालों में इस भाषा में काफी उत्साह से नेपाली साहित्य का भण्डार भरने का काम हुआ है । इस भण्डार में कई विश्वस्तर की साहित्य रचना पायी जाती हैं । विगत आठ दशकों का नेपाली साहित्य को देखें तो लगता है कि नेपाली साहित्य बड़ी छलांग मारते-मारते आज के विश्वस्तर की उत्तर आधुनिक तथा समकालीन साहित्य रचना से कंधा मिलाते हुए दिखाई देता है। आज के विश्व साहित्य से रु-ब-रु होते हुए भी नेपाली साहित्य ने अपनी पृथक होने की पहचान नहीं खोई है । नेपाली साहित्य नेपाली मिट्टी अर्थात् नेपाली संस्कृति की गंध से अलग नहीं है ।

नेपाल की चार सीमाओं में से तीन सीमाएँ भारत से सटी हुई हैं । इस भौगोलिक अवस्थान का बड़ा प्रभाव नेपाली संस्कृति और भाषा पर दिखाई देता है । वैसे तो हिन्दी साहित्य का प्रभाव नेपाल के लेखकों में कम नहीं दिखाई देता । अधिकतर नेपाली पाठकों के लिए दूसरी संपर्क भाषा जैसी है हिन्दी भाषा । इसीलिए नेपाली भाषियों के लिए हिन्दी पत्रिकाएँ, हिन्दी साहित्य पढ़ना सामान्य बात है । हिन्दी साहित्य और साहित्यकारों के बारे में नेपाली साहित्यिक वर्ग थोड़ी-बहुत जानकारी रखते ही हैं । लेकिन विडम्बना यह है कि हिन्दी साहित्यकारों को नेपाली साहित्य के बारे में बहुत ही कम जानकारी है । अपने सबसे करीबी पड़ोसी देश के होते हुए भी उसके साहित्य के बारे में इतनी कम जानकारी होने के पीछे क्या-क्या कारण हो सकते हैं ? इस प्रश्न का सबसे पहला कारण होगा कि नेपाली साहित्य का हिन्दी भाषा में अनुवाद होने की कमी । इसके अलावा और भी कई कारण हो सकते हैं । लेकिन अभी उस तरफ न जाते हुए मैं अपनी बात अनुवाद तक ही सीमित रखता हूँ । अधिकतर नेपाली लेखक-सर्जक हिन्दी साहित्य सीधे हिन्दी में ही (बिना अनुवाद के माध्यम) पढ़ते हैं, पढ़ सकते हैं जबकि हिन्दी पाठकों को नेपाली में लिखे हुए साहित्य को समझने के लिए अनुवाद का सहारा लेना पड़ता है और नेपाली साहित्य का जितना अनुवाद हिन्दी में होना चाहिए था उतना हुआ ही नहीं । जब तक नेपाली भाषा के स्तरीय साहित्यों का अनुवाद हिन्दी भाषा में नहीं होगा तब तक हिन्दी पाठकों के लिए नेपाली साहित्य अनसुनी कहानी, अनकही बात-सी लगेगी ।

एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि नेपाली भाषा सिर्फ नेपाल की ही भाषा नहीं है । भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में मान्यता प्राप्त प्रमुख भारतीय भाषाओं में से एक नेपाली भाषा भी है । इससे भी पहले साहित्य अकादमी द्वारा इस भाषा को मान्यता दी गई थी और हर साल (पिछले बयालीस सालों से) इस भाषा में लिखे हुए उत्कृष्ट नेपाली साहित्य को अकादमी पुरस्कार दिया जाता रहा है । लेकिन सबसे बड़ी विडम्बना तो यह है कि नेपाली भाषी भारतीय कवि-लेखकों को कई राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रमों में नेपाल से आए हुए अतिथियों की तरह देखा-समझा जाता है । मैं खुद भी इस बात का भुक्तभोगी हूँ । कई ऐसे लोगों से भी सामना हुआ है जो भारत की हिन्दी से इतर आंचलिक भाषाओँ को छोटी भाषा समझते हैं । इसी साल मार्च माह में विश्व कविता दिवस के अवसर पर साहित्य अकादेमी द्वारा दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय कवि सम्मेलन में भारतीय-नेपाली भाषी कवि के रूप में मैंने चार-पाँच कविताएँ पढ़ी थी और एक-दो कविताओं के लिए श्रोताओं से मुझे वाहवाही भी मिली । सत्र के बाद चायपान पर मैं ब्रजेंद्र त्रिपाठी जी से कुछ बातें कर रहा था तो एक श्रोता हमारे नजदीक आए और मुझे संकेत करते हुए ब्रजेंद्र जी से बोले - 'छोटी भाषा में भी इतनी सशक्त कविता लिखी जाती हैं, आज पता चला' ब्रजेंद्र जी तपाक से बोले - 'कोई भी भाषा छोटी-बड़ी नहीं होती... बोलने वालों की संख्या अधिक होने से भाषा बड़ी नहीं होती...नेपाली भाषा का भी अपनी समृद्ध साहित्य है... !' उस आदमी को देखकर मैं चुपचाप मुस्कुराता रहा । मेरी तरफ से ब्रजेंद्र जी ने ही जवाब दे दिया था । जो भी हो, अनुवाद सबसे बड़ा माध्यम है एक-दूसरे के साहित्य और संस्कृति को जानने व समझने के लिए । नेपाली साहित्य, चाहे वो नेपाल का हो या भारत के नेपाली भाषियों का हो, उनका पर्याप्त अनुवाद हिन्दी में होना अत्यन्त आवश्यक है जिससे हम एक-दूसरे के और भी करीब आ सकते हैं ।

-मनप्रसाद सुब्बा
दार्जिलिंग (भारत)
लेखक साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित कवि हैं ।

सम्पादकीय

यह आत्महत्या नहीं, हत्या है...

सुधाकर पाठक
सम्पादक एवं अध्यक्ष,
हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

पिछले कई वर्षों से इस तरह की दुखद घटनाओं की लगातार पुनरावृति हो रही है । इस बार इंदौर के देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के भाषा प्रौद्योगिकी के प्रथम वर्ष के एक होनहार छात्र शुभम मालवीय ने अंग्रेजी विषय में कमजोर होने और अंग्रेजी की अनिवार्यता के कारण अपनी शिक्षा पूरी न कर पाने के चलते अपनी जीवन लीला समाप्त कर ली । शुभम ने अपने आत्महत्या के नोट में लिखा है, "मम्मी-पापा मुझे माफ कर देना । आप लोग मुझे पढ़ाना चाहते थे, लेकिन मुझे अंग्रेजी नहीं आती है इसलिए मैं ठीक से पढ़ नहीं पा रहा हूँ । मेरी मौत के बाद दोनों भाइयों का ख्याल रखना ।" शुभम के पिता सब्जी बेचते हैं और शुभम के भविष्य में ही अपने परिवार का भविष्य देख रहे थे जो अब अंधकारमय हो गया है । शुभम ने अपनी विद्यालय स्तर तक की शिक्षा हिन्दी माध्यम से पूरी की थी और स्वाभाविक है कि हिन्दी माध्यम से पढ़े हुए इस छात्र को अब अंग्रेजी की अनिवार्यता के चलते अपनी शिक्षा को जारी रखने में कठिनाई हो रही होगी जिसके कारण उसे यह आत्मघाती कदम उठाना पड़ा । इस दुखद घटना की जैसी प्रतिक्रिया देश में, विशेष रूप से हिन्दी जगत में, होनी चाहिए थी वैसी नहीं हुई । कुछ हिन्दी सेवी महानुभावों ने सोशल मीडिया पर गुस्सा निकाला और कुछ ने वहीं शुभम को श्रद्धांजलि भी दे डाली । समाचार पत्रों के लिए भी यह एक छोटी-मोटी दुर्घटना मात्र रही जिसे किसी ने अनमने मन से प्रकाशित किया और बहुतों ने इसे छापना भी जरुरी नहीं समझा ।

आंकड़े बताते हैं कि प्रत्येक वर्ष लगभग 4-5 विद्यार्थी अंग्रेजी की अनिवार्यता के कारण आत्महत्या कर लेते हैं । यह संख्या तो वह है जो आत्महत्या करते हैं, लेकिन उस भयावह स्थिति की कल्पना कीजिये जब गरीब, मजदूर, किसान का वह होनहार बेटा जो हिन्दी माध्यम से पढ़कर अव्वल अंकों से पास होता है, जिसके ऊपर उसके परिवार का पूरा भविष्य टिका होता है, जो अपनी शिक्षा में किसी से कम नहीं है और उज्जवल भविष्य के सपने सँजोये बड़े-बड़े संस्थानों में अपनी उच्च शिक्षा के लिए प्रवेश लेता है लेकिन केवल अंग्रेजी न आ पाने के कारण नकारा साबित कर दिया जाता है । दिन-प्रतिदिन की होने वाली इस पीड़ा और अपमान से वह तिल-तिल करके रोज मरता है । उल्लेखनीय है कि विश्व के किसी देश में पढ़ाई का माध्यम विदेशी भाषा नहीं है किन्तु हमारे देश में लाखों प्रतिभाशाली छात्र आई.आई.एम. और आई.आई.टी. की शिक्षा अधूरी छोड़ देते हैं । शिक्षानीतिकारों, भाषाविदों, शिक्षाविदों, राजनेताओं, शासकों का ध्यान कभी भी इस गंभीर मुद्दे की तरफ नहीं जाता है और न ही उन्हें इस बात की चिंता है कि देश का युवा वर्ग इस शिक्षा नीति के कारण अपंगु और कुंठाग्रस्त हो रहा है ।

देश में कुछ इस तरह का वातावरण बन गया है कि आज अच्छी नौकरी और रोजगार कि गारंटी सिर्फ अंग्रेजी भाषा में ही है । स्वतन्त्रता के 70 वर्षों के बाद भी हम अपनी समृद्ध भाषाओं को रोजगार और उच्च शिक्षण से नहीं जोड़ पाये हैं जबकि हमारी भाषाओं में इसकी पूर्ण योग्यता है । जब यह वैज्ञानिक रूप से साबित हो चुका है कि बच्चे का प्रारम्भिक स्तर पर शिक्षण उसकी मातृभाषा में किया जाये तो वह बच्चों के भविष्य के लिए ज्यादा प्रभावी होता है, बच्चे स्वतंत्र चिंतन और सृजनात्मक चिंतन में ज्यादा सफल होते हैं, तो भी हम प्रारम्भिक शिक्षा अंग्रेजी माध्यम से कराने में लगे हुए हैं । विश्व स्तर पर जब हम देख रहे हैं कि अन्य विकसित देशों ने अपनी मातृभाषा में शिक्षा देकर स्वयं को विश्व के अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं में सम्मलित कर लिया है फिर भी हम एक विदेशी भाषा की गुलामी में देशहित को तलाश कर रहे हैं ।

पिछले वर्ष एक हिन्दीतर क्षेत्र के प्रिशिक्षु डॉक्टर ने चंडीगढ़ में आत्महत्या कर ली थी और अपनी माता को लिखे आत्महत्या के लेख में उन्हें हिन्दी न आ पाने के कारण अपने मरीजों का इलाज करने में असुविधा होने की बात लिखी थी क्योंकि इन्होने अपनी शिक्षा अंग्रेजी माध्यम से पूरी की थी, लेकिन संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी न जानने के कारण उत्तर भारत में अपनी शिक्षा सुचारु रूप से नहीं कर पा रहे थे।

ये ऐसे कुछ उदाहरण हैं जो स्पष्ट रूप से हमारी वर्तमान भाषानीति पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं । हम आजादी से लेकर अब तक न तो सही शिक्षा नीति लागू कर पाए और न ही किसी भारतीय भाषा को आधिकारिक रूप से संपर्क भाषा बना पाए । हम 70 वर्षों बाद भी अंग्रेजी के ढोल को गले में डाले शिक्षा में और संपर्क भाषा के रूप में लगातार बजाये जा रहे हैं, वह अंग्रेजी भाषा जिसे दो सौ वर्षों बाद भी पूरे भारत में ठीक से पांच प्रतिशत लोगों की भाषा भी नहीं बना पाए । अब समय आ गया है कि इन नीतियों पर पुनर्विचार होना चाहिए और भारतीय भाषाओं को केंद्र में रख कर राष्ट्र हित में निर्णय लिए जाने चाहिए जिससे अब कोई और शुभम मालवीय इन नीतियों के कारण आत्महत्या न करे ।

साक्षात्कार : श्री गंगा प्रसाद उप्रेती

हिन्दी भाषा साहित्य का नेपाल के प्राज्ञिक क्षेत्र और संचार माध्यमों पर गहरा प्रभाव है...

गंगा प्रसाद उप्रेती

नेपाल प्रज्ञा संस्थान भाषा, साहित्य, संस्कृति तथा दर्शन के संरक्षण, संवर्धन और विकास हेतु नेपाल सरकार द्वारा स्थापित संस्था है । सुविख्यात नेपाली भाषा शिक्षक, लेखक, साहित्यकार श्री गंगा प्रसाद उप्रेती को इस संस्थान का दूसरी बार कुलपति नियुक्त किया गया है । प्रस्तुत है हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के लिए उनके साक्षात्कार के कुछ अंश । यह साक्षात्कार श्री भीष्म उप्रेती, निदेशक नेपाल राष्ट्र बैंक (केन्द्रीय बैंक) द्वारा लिया गया । हमें आशा है कि इस साक्षत्कार से न केवल इस प्रतिष्ठित संस्थान के विषय में पाठकों को महत्वपूर्ण जानकारी मिलेगी बल्कि नेपाल और भारत के साहित्यिक संबन्धों को जानने-समझने का अवसर भी मिलेगा । डॉ. रमेश तिवारी, कार्यकारी सम्पादक

डॉ. रमेश तिवारी

प्रश्न : नमस्कार ! हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के पाठकों की तरफ से आपका हार्दिक स्वागत है । आप नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान के एक अति सम्माननीय और गरिमामयी पद पर आसीन हैं । यहाँ तक की यात्रा कैसी रही ? हमारे पाठकों को संक्षिप्त रूप में कुछ बतायें।

उत्तर : हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के परिवार को सद्भाव के लिए धन्यवाद । नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान के कुलपति की हैसियत में कार्यरत यह मेरा दूसरा कार्यकाल है । पहली बार कुलपति के कार्यभार संभालने से पूर्व एक कार्यकाल उप-कुलपति (2008-2013) के रूप में भी कार्यरत रहा । उप-कुलपति के कार्यकाल की भी गणना करें तो नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान में यह मेरा तीसरा कार्यकाल है । यहाँ तक की यात्रा के सवाल में कहूँ तो यह यात्रा मैंने सुखद महसूस की है । इस समय हमारा पूरा प्रयत्न प्रज्ञा-प्रतिष्ठान को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय रूप में गरिमामयी प्राज्ञिक संस्था के रूप में स्थापित करने की ओर लक्षित है और ऐसा लगता है कि हम इसी लक्ष्य पर ही उन्मुख हैं।

प्रश्न : नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान क्या-क्या गतिविधियाँ करती हैं ? यहाँ तक की विकास यात्रा के बारे में कुछ बतायें ।

उत्तर : नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान 22 जून, 1957 में नेपाली भाषा, कला, साहित्य, संस्कृति और ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में अध्ययन, अनुसंधान के माध्यम से प्रवर्द्धन करने के कार्यभार के साथ स्थापित संस्था है । यह प्रतिष्ठान अपने स्थापना काल से ही अपने लक्ष्यों के अनुरूप कार्य करते हुए आ रही है । बीच में इसी प्रतिष्ठान के अंतर्गत विज्ञान विधा के प्रवर्द्धन के लिए अलग से नेपाल विज्ञान प्रज्ञा-प्रतिष्ठान की स्थापना की गयी और उसी विधा के लिए दिए गए अख्तियार को पूरा करने के लिए उक्त प्रतिष्ठान भी संतोषप्रद काम करते हुए आ रही है । नेपाल के पिछले राजनितिक परिवर्तन ने देश को संघीय गणतंत्रात्मक संरचना में रूपांतरण करने के बाद देश की ललित कला और संगीत नाट्य विधा के प्रवर्द्धन के लिए अलग-अलग प्रज्ञा-प्रतिष्ठान कार्यरत हैं । मेरे कार्यरत नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान को देश की भाषा, संस्कृति, साहित्य, सामाजिक शास्त्र और दर्शन विधा के प्रवर्द्धन के लिए अख्तियार प्राप्त हैं । प्राप्त अख्तियार को पूरा करने के लिए अध्ययन, अनुसंधान, गोष्ठी, सेमिनार तथा ग्रन्थ लेखन और प्रकाशन करते हुए राष्ट्रीय स्तर पर देश की बहुलता को संबोधित करने हेतु हम कार्यरत हैं । अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हमारी प्रकृति से मेल रखने वाले अन्य देश के समकक्षी प्रज्ञा-प्रतिष्ठान के साथ सहकार्य करने का काम भी प्रभावकारी रूप से सम्पन्न किया जा रहा है ।

प्रश्न : नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान क्या हिन्दी भाषा साहित्य के संदर्भ में भी कुछ गतिविधियाँ करती है ?

उत्तर : हिन्दी भाषा को नेपाल के प्राज्ञिक क्षेत्र और संचार माध्यमों में गहरा प्रभाव जमाने में सफल अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हम लेते हैं। हम जानते हैं कि हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के द्वारा विकसित भारतीय साहित्य नेपाली नागरिकों के लिए ज्ञानवर्द्धन का महत्वपूर्ण साधन है । इस अर्थ में हिन्दी भाषा और साहित्य की कृतियों का प्रकाशन करना, नेपाली और हिन्दी भाषा में प्रकाशित कृतियों का अनुवाद के माध्यम से आदान-प्रदान करना हमारे नियमित कार्यक्रम होते हैं । हमारे प्रज्ञा-प्रतिष्ठान के अंतर्गत एक महत्वपूर्ण विभाग के रूप में हिन्दी विभाग है । इस विभाग के संयोजन में भारतीय साहित्य की कई कृतियों को नेपाली में और नेपाली साहित्य की कृतियों को हिन्दी भाषा में अनुदित कर प्रकाशित किया गया है और प्रकाशित होने का क्रम अभी जारी है । इसी विभाग द्वारा 'रूपांतरण' नाम से अनुवाद कर्म में समर्पित पत्रिका का नियमित रूप से प्रकाशन किया जाता है । इस पत्रिका में मुख्य रूप से हिन्दी से नेपाली और नेपाली से हिन्दी में अनुदित कृतियों का प्रकाशन किया जाता है ।

प्रश्न : नेपाली और हिन्दी भाषा साहित्य के परस्पर विकास एवं अंतर संबंध के लिए क्या-क्या सार्थक प्रयास किये जा सकते हैं? आप क्या-क्या संभावनाएं देखते हैं ?

उत्तर : नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान का संस्थागत संबंध भारत की साहित्य अकादमी के साथ रहा है । दोनों संस्थाओं के सहकार्य में नेपाली और हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में लिखित साहित्य का आदान-प्रदान किया जा सकता है । इसके अलावा सह प्रकृति की अन्य संस्थाओं के साथ मिलकर भी काम किया जा सकता है . इस तरह के काम शुरू भी किये जा चुके हैं ।

प्रश्न : नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान की आगामी योजनाएं क्या-क्या हैं? इस पर कुछ प्रकाश डालिए ।

उत्तर : प्रज्ञा-प्रतिष्ठान को स्तरयुक्त प्राज्ञिक संस्था के रूप में विकसित करने के लिए इसके कुछ पूर्वाधारों का निर्माण तथा निर्मित पूर्वाधारों की स्तरोन्नति करना आवश्यक है । विशेष कर भारतीय सहयोग से निर्मित पुस्तकालय भवन में प्रज्ञा-प्रतिष्ठान का पुस्तकालय संचालित होते हुए आ रहा है । इसकी स्तरोन्नति के लिए जगह अपर्याप्त है । भारत सरकार से इस भवन में अन्य दो मंजिल बढ़ाकर पर्याप्त जगह बनाने के लिए बात हो चुकी है । पुस्तकालय की पाठ्यसामग्रियों को डिजिटलाइज्ड कर ई-लाइब्रेरी के रूप में विकसित किया जायेगा ।

प्रश्न : हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के पाठकों के लिए आप क्या संदेश देना चाहेंगे ?

उत्तर : हिन्दुस्तानी भाषा भारती नाम की पत्रिका के साथ हमारा संबंध अभी-अभी स्थापित ही हुआ है । आपके प्रतिनिधि के माध्यम से हमें आपका प्रकाशन देखने को मिला । भाषा और संस्कृति के पारस्परिक महत्व के विषय में हम सहकार्य कर सकते हैं । आप लोग तत्पर रहें तो कुछ साझा काम कर सकते हैं । आप लोगों ने नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान के संस्थागत महत्व को समझकर सदभाव के साथ संपर्क किया । मैं मानता हूँ कि यह एक सुखद संयोग है और भाषा भारती परिवार के मित्रों का हमारे प्रति सदभाव का उच्च मूल्यांकन करते हुए आप लोगों को हार्दिक धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ। पत्रिका की नियमितता और साहित्य प्रवर्द्धन के लिए आप लोगों का प्रयास सार्थक और सफल हों, यह शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के लिए आपने अपना बहुमूल्य समय दिया । इसके लिए आपका बहुत-बहुत आभार और हमारी शुभकामनाएं हैं ।

– गंगा प्रसाद उप्रेती
कुलपति,
नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान

लोकतंत्र में भाषा की भूमिका को अधिक दिनों तक नजरअंदाज नहीं किया जा सकता ।
जनता को उसकी अपनी भाषा में जीने का अवसर मिलना चाहिए ।
आज जब सृजनात्मकता और नवाचार को लेकर देश उत्साहित है तो हिन्दी को अवसर मिलना चाहिए ।

– प्रो. गिरीश्वर मिश्र

चमत्कार लोक भाषाओं का

नेपाली भाषा साहित्य और हिन्दी की स्थिति

युगों-युगों से लाखों सैलानियों को अपनी सुन्दरता से मुग्ध करने वाला, अपार शांति की पोखर में डुबोने वाला, आध्यात्मिक चेतना से सिंचने वाला देश नेपाल अपनी प्राकृतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं ऐतिहासिक संपदाओं के लिए पूरे विश्व में जाना-माना जाता है। पौराणिक काल से ही यह दर्शन और अध्यात्म का केंद्र रहा है। यहाँ के कई देवस्थलों, मार्गों और नदियों के नामों को लेकर कई पौराणिक किवदंतियां पायी जाती हैं। जैविक व भौगोलिक विविधताओं, परम्पराओं का धनी देश नेपाल विश्व में अलौकिक एवं पुण्य है। भगवान गौतम बुद्ध और जानकी माता की जन्मभूमि होने का गौरव प्राप्त नेपाल विश्व में रुद्राक्ष, शालिग्राम और चन्दन का प्रमुख स्रोत भी है। हिंदुओं की आस्था का केंद्र पशुपतिनाथ यहीं अवस्थित है। विश्व का सर्वोच्च शिखर सगरमाथा (माउंट एवरेस्ट) यहीं है। बारहों महिने लगातार बहने वाली कोसी, गण्डकी, कर्णाली और महाकाली जैसी विशाल नदियाँ यहीं हैं, इसीलिए ब्राजील के बाद नेपाल को पानी का द्वितीय धनी देश भी कहा जाता है।

घने जंगलों, वन्यजन्तु, खनिज संसाधनों, अनुपम प्राकृतिक दृश्यों के लिए प्रसिद्ध देश नेपाल अपनी भाषा, कला, साहित्य व संस्कृति के लिए भी विश्व में सबसे पृथक है। किसी भी देश की राष्ट्रभाषा उसके इतिहास, वैभव, साहित्य, संस्कृति व सभ्यता का प्रतिनिधित्व करती है। भाषा के बगैर कोई भी देश पूर्णतया स्वतंत्र नहीं हो सकता। किसी भी सार्वभौम सम्पन्न देश की राष्ट्र भाषा में वह शक्ति निहित होती है जो प्रजा को राष्ट्रीय बोध की भावना से बांधे रखती है। भौगोलिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक विविधताओं के बावजूद भी लोगों में सहिष्णु, प्रेम, भाईचारा,बंधुत्व, संगठनिक एक्यबद्धता के सूत्र में जोड़ने की केन्द्रीय भूमिका निर्वाह करती है। नेपाल एक बहु-भाषीय, बहु- जातीय, बहु-संस्कृति एवं परम्पराओं का अनुपम देश है। राष्ट्रीय जनगणना 2011 के अनुसार नेपाल में 123 भाषाएँ बोली जाती हैं। जो भाषा की हरियाली यहाँ देखने एवं सुनने को मिलती है वह अन्यत्र कहीं नहीं है।

नेपाल की राष्ट्र भाषा नेपाली है और यह नेपाल के लोगों की संपर्क भाषा के साथ-साथ लगभग पचास प्रतिशत लोगों की मातृभाषा भी है। नेपाली भाषा एक विनम्र, सभ्य और समृद्ध भाषा है। यह भाषा नेपाल के अलावा भारत के सिक्किम, पश्चिम बंगाल, उत्तर-पूर्वी राज्यों आसाम, मणिपुर, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश तथा उत्तराखंड के अनेक लोगों की भी मातृभाषा है। इसके अतिरिक्त भूटान, तिब्बत और म्यांमार के अनेकों लोग भी नेपाली लिखते, बोलते, पढ़ते व जानते-समझते हैं। हिन्दी, संस्कृत, मराठी, कोंकणी, बोड़ो, डोगरी, मैथिली की ही तरह नेपाली भाषा की लिपि भी देवनागरी लिपि है। नेपाल विश्व में मित्रवत व्यवहार करने वाला, शांतिप्रिय व अनुशासित देश है। नेपाली भाषा साहित्य एक चेतनामयी, समृद्ध , परिपक्व, विवेकी, ओजस्वी एवं स्वस्थ साहित्य है। नेपाली भाषा का इतिहास बहुत पुराना है यद्यपि नेपाली भाषा साहित्य का इतिहास इतना लंबा नहीं है। नेपाली भाषा साहित्य का उद्गम अठारहवीं शताब्दी से माना जाता है। नेपाली भाषा के प्रथम कवि के रूप में भानुभक्त आचार्य का नाम लिया जाता है। इसीलिए उन्हें नेपाली भाषा साहित्य के आदिकवि के रूप में जाना जाता है। उनसे पहले का नेपाली साहित्य केवल मौखिक एवं श्रुति परंपरा पर आधारित हुआ करता था। 'बधु शिक्षा', 'प्रश्नोत्तर' और 'भक्तमाला' आदि इनकी प्रसिद्ध कृतियाँ है । भानुभक्त के काल को भक्तिकाल अथवा भक्ति धारा के रूप में जाना जाता है। आदिकवि भानुभक्त आचार्य ने संस्कृतनिष्ठ अध्यात्म रामायण का नेपाली भाषा में अनुवाद कर नेपाली भाषा साहित्य को एक अतुलनीय योगदान दिया। भानुभक्तकृत रामायण वस्तुतः नेपाली 'रामचरित मानस' है। नेपाली भाषा साहित्य में अनुवाद की नींव भी सर्व प्रथम भानुभक्त आचार्य द्वारा ही डाली गयी। उनके द्वारा ही नेपाली भाषा को शक्ति एवं आत्मबोध प्राप्त हुआ। प्रारंभिक नेपाली साहित्य में वार्णिक छंद का आरम्भ भी उन्हीं के द्वारा हुआ। उनकी इस छंदोबद्ध रामायण के कारण ही 'रामायण' नेपाली घर-घर में लोकप्रिय हुई। नेपाली साहित्य में भानुभक्तकृत रामायण को सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

राजकुमार श्रेष्ठ

एक दिन नारद सत्यलोक पुगि गया लोकको गरौं हित भनी ।
ब्रह्मा ताहीं थिया पर्या चरणमा खुसी गराया पनि ॥

भानुभक्त के बाद नेपाली भाषा साहित्य में मोतीराम भट्ट का नाम सगौरव लिया जाता है। उनके द्वारा ही नेपाली साहित्य में बंगला, हिन्दी और उर्दू साहित्य का प्रभाव पड़ा जिससे नेपाली भाषा और साहित्य में व्यापकता का प्रसार हुआ। मोतीराम भट्ट की मृत्यु अल्पायु में हुई लेकिन नेपाली साहित्य में उनका बहुत बड़ा योगदान है। वे मूलतः श्रृंगारिक धार के कवि थे। 'कनक सुंदरी', 'प्रियदर्शिका' 'गजेन्द्र मोक्ष' आदि उनकी श्रृंगारिक धार की प्रमुख कृतियाँ हैं । वे प्रकाशक, पत्रकार, नाटककार, जीवनी लेखक, समालोचक, कवि एवं भाषासेवी भी थे। अपने संपादकत्व में गोरखा भारत जीवन नामक साहित्यिक पत्रिका का प्रकाशन भी किया। नेपाली भाषा में समालोचना विधा की शुरुआत भी मोतीराम भट्ट ने

ही की थी । नेपाली भाषा साहित्य के प्रथम गजलकार और जीवनीकार का श्रेय भी उन्हीं को जाता है । मोतीराम भट्ट ने नेपाली जनमानस के समक्ष आदिकवि भानुभक्त आचार्य को पहचान दिलाने का काम किया । भानुभक्त के अप्रकाशित व फुटकर काव्यों को खोज-खोज कर उनकी जीवनी को साकार रूप देने का काम मोतीराम भट्ट ने ही किया । द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन के प्रभाव से पहले ही नेपाली साहित्य में आधुनिकता का प्रवेश हो चुका था । जब पूरे भारतवर्ष में अंग्रेजी हुकुमत कायम थी तब नेपाल में वंशवादी, निरंकुश एकतंत्रीय राणा शासनतंत्र था । उस कालखण्ड में जनता को शिक्षा के अधिकार से पूर्णतया बंचित रखा जाता था । अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी बंदेज थी । जनता का शोषण किया जाता था । राणा शासन के विरुद्ध बोलने वाले सख्त सजा के भागिदार होते थे । ऐसे क्रूर और निर्दयी राणा शासन से लोहा लेने वाले आधुनिक चेतना के कवियों की कमी नहीं थी । तब शासन के विरूद्ध प्रत्यक्ष रूप से विद्रोह नहीं किया जा सकता था । कवियों को शब्दों की चातुर्यता और बिम्बों के माध्यम से बड़े ही घुमावदार तरीके से जनता के समक्ष अपनी बात रखनी पड़ती थी । तब के साहित्य को ठीक से समझने के लिए माथे के पसीने छूटते थे । ऐसी पाबंदियों के बावजूद भी जनता का प्रतिनिधित्व करने वाले, विद्रोह व क्रांति करने वाले कवियों में युगकवि सिद्धिचरण श्रेष्ठ, भवानी भिक्षु, महाकवि लक्ष्मीप्रसाद देवकोटा, बालकृष्ण सम, शिरोमणि लेखनाथ पौड्याल, धरणीधर कोइराला, भीमनिधि तिवारी, युद्ध प्रसाद मिश्र एवं केदारमान व्यथित इत्यादि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

युगकवि की पदवी से सम्मानित कवि सिद्धिचरण श्रेष्ठ को स्वच्छंदतावादी काव्यधारा के प्रवर्तक के रूप में जाना जाता है । इनकी कविताओं में एकतंत्रीय राणा शासन विरोधी युगीन विद्रोह और क्रांति की आवाज पायी जाती है । बहुमुखी प्रतिभा के धनी कवि भवानी भिक्षु के काव्यों में अस्तित्ववाद व समाजवाद के स्वर मुखरित हैं । आधुनिक नेपाली कविता में परिष्कारवादी काव्य धारा की शुरुआत लेखनाथ पौड्याल द्वारा की गयी थी । लेखनाथ पौड्याल के आगमन के साथ ही नेपाली साहित्य में आधुनिक काल का प्रवेश हुआ । 'ऋतु विचार','तरुण तपसी','बुद्धि विनोद' एवं 'सत्यकलि संवाद' आदि उनकी परिष्कारवादी धारा की प्रमुख कृतियाँ हैं । नेपाली भाषा साहित्य के उच्चकोटी के कवि, निबंधकार, नाटककार, कथाकार, समालोचक के रूप में महाकवि लक्ष्मीप्रसाद देवकोटा का नाम अग्रपंक्ति में लिया जाता है । वे चौदह भाषा के ज्ञाता थे । देवकोटा के सम्बन्ध में महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने कहा है कि अगर पन्त-प्रसाद-निराला तीनों की काव्य चेतना को देवकोटा से तुलना की जाय तो भी देवकोटा इनमें अतुलनीय व विशिष्ट हैं । इसीलिए उन्होंने देवकोटा को भारतीय कवि पन्त-प्रसाद-निराला का समुच्च रूप कहा है । देवकोटा ओजस्वी आशुकवि थे । सुलोचना महाकाव्य, शाकुन्तल महाकाव्य और मुनामदन खण्डकाव्य आदि की रचना कुछ ही दिनों में कर डाली थी । एक साक्षात्कार में उन्होने कहा था कि मुनामदन को छोडकर मेरी सारी रचनाएँ जला दी जाये । मुनामदन नेपाल में सर्वाधिक लोकप्रिय खंड काव्य है । उनकी विख्यात 'पागल' कविता के कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत हैं –

जरूर साथी मैं पागल हूँ !
ऐसा ही है मेरा हाल मैं शब्दों को देखता हूँ,
दृश्यों को सुनता हूँ,
खुशबू से संवाद करता हूँ ।
आसमान से भी महीन चीजों को छूता हूँ
वे चीज, जिसका अस्तित्व लोक नहीं मानता
जिसका आकार संसार नहीं जानता
मैं बोलता हूँ उनके साथ,
जैसे बोलते हैं वो मेरे साथ
एक भाषा, साथी !

नाट्य शिरोमणि के नाम से विख्यात बालकृष्ण सम को वर्ल्डमार्क इंसाइक्लोपिडिया ऑफ नेशंस में नेपाली साहित्य का 'शेक्सपियर' कहा गया है । नेपाली साहित्य को बौद्धिकता की छाप देने वाले सम एक कुशल वक्ता, अभिनेता, चित्रकार व दार्शनिक चिन्तक भी थे । वे नेपाल के प्रथम समाचार पत्र 'गोरखापत्र' के संपादक भी रहे । रेडियो नेपाल के निदेशक पद पर भी लम्बे समय तक आसीन रहे । सर्वश्रेष्ठ नाटककार व निबंधकार होने के साथ-साथ उन्होंने 'आगो र पानी' (आग और पानी), 'चिसो चुलो' (ठंडा चूल्हा) जैसी खंडकाव्यों एवं महाकाव्यों की भी रचना की । 'मुकुंद इंदिरा', 'अमर सिंह', 'प्रहलाद', 'ध्रुव', 'भक्त भानुभक्त', 'भीमसेन का अंत', 'कैकेयी', 'तानसेन की झड़ी', 'प्रेम पिंड' और 'तपोभूमि' इत्यादि इनकी चर्चित कृतियाँ हैं ।

नेपाली भाषा साहित्य की आधुनिकतम काव्यधारा सशक्त है । इस समय के कवियों में गोपाल प्रसाद रिमाल, पारिजात, भूपी शेरचन, म. बी. वि. शा, श्यामदास वैष्णव, तुलसी दिवस, प्रेमा शाह, व काली प्रसाद रिजाल इत्यादि के नाम उल्लेखनीय हैं । जब आधुनिक नेपाली काव्य परंपरा में पद्य और शास्त्रीय छन्दोबद्ध काव्यों का वर्चस्व था तब छंदविहीन काव्य की शुरुआत गोपाल प्रसाद रिमाल ने की । 'आमाको सपना' (माँ का सपना) उनकी इसी धार की एक चर्चित नेपाली कविता है जो आज भी उतनी ही सांदर्भिक लगती है । देखिए, उनकी 'होश' कविता के कुछ अंश–

मैं इंसान अपनी खुशी से पैदा नहीं हुआ,
अपनी खुशी से मरूँगा भी नहीं
यह ज्ञान किसे है साथी?
यह संसार एक सपना है,
जीवन पानी का बुलबुला है,
यहाँ कोई भी अपना नहीं है,
जो भी हैं, वे सभी
तुम्हारी ही तरह पैदा हुए हैं ।

शुरू में इस धारा की कविताओं को कविता के रूप में स्वीकार ही नहीं किया जाता था । लेकिन इस विधा को आगे बढ़ाने का काम किया भूपि शेरचन ने । थोड़े शब्दों में, बिम्ब और प्रतीकों के माध्यम से गहन भाव अभिव्यक्त करने की कला भूपि में पायी जाती है । संभ्रात परिवार में जन्में भूपि ने हमेशा सत्ता और सामंती शक्ति के विरुद्ध लिखा । गोपाल प्रसाद रिमाल को नेपाली साहित्य की काव्य धार परिवर्तन करने का पूरा श्रेय दिया जाता है और भूपि ने उसमें भी अपनी एक पृथक शैली स्थापित की । जहाँ रिमाल ज्यादा आक्रामक, विद्रोही और क्रन्तिकारी थे वहीँ भूपि व्यंग्यात्म, शब्दों व बिम्बों की चातुर्य और सरल भाषा का प्रयोग किया करते थे । 'यह हल्ला-ही-हल्लाओं का देश है' उनकी एक छंदविहीन बहुचर्चित कविता है । आज के लोकतंत्रीय नेपाल में भी यह कविता समसामयिक लगती है ।

हे ! मेरे देश के राष्ट्र कवियों
हे ! मेरे देश के सम्मानीय नेताओं
कहना ही है तो कहो मुझे
स्वदेश निंदक अथवा घृणा चिन्तक
लेकिन यह देश जितना तुम्हारा है उतना मेरा भी है
अगर बाँटना भी चाहो तो
इस देश के एक करोड़ टुकड़ों में से
एक टुकड़े पर मेरी झोपड़ी भी होगी
यही भावना मुझे कहने को विवश करती है
और हौसला देती है यह कहने को
कि यह हल्ला-ही-हल्लाओं का देश है ।

कथ्य और शिल्प दोनों ही दृष्टि से नवीनतम साहित्यिक आंदोलन के रूप मे प्रयोगवादी धारा को लिया जाता है । परंपरागत भाषा व्याकरण से इतर भाव संयोजन बिम्ब और प्रतिकों का इस धारा की कविताओं मे अधिक प्रयोग किया जाता है । नेपाली साहित्य मे प्रयोगवादी काव्य धारा की नींव मोहन कोइराला ने रखी । 'लेक','नदी किनारे का मांझी','ऋतु नियंत्रण' आदि उनकी प्रयोगवादी कृतियाँ हैं । उनके बाद बैरागी काईंला, ईश्वर वल्लभ, इंद्र बहादुर राई, तोया गुरूङ, वानिरा गिरि, गोपाल पराजुली आदि इस धारा के प्रमुख कवि हैं ।

काव्य के बाद नेपाली साहित्य में संख्यात्मक हिसाब से कथा का दूसरा स्थान है । सामाजिक यथार्थवादी धारा के कथाकारों में गुरुप्रसाद मैनाली,भीमनिधि तिवारी, हृदयचन्द्र सिंह प्रधान, श्यामदास वैष्णव, अगमसिंह गिरि एवं चक्रपाणी चालिसे आदि महत्वपूर्ण माने जाते हैं। मनोवैज्ञानिक यथार्थवादी धार के महत्वपूर्ण कथाकारों में विश्वेश्वर प्रसाद कोइराला, भवानी भिक्षु, गोविन्द बहादुर मल्ल 'गोठाले', विजय मल्ल, कमल दीक्षित आदि के नाम उल्लेखनीय हैं । नेपाली साहित्य में नाटकों का आरम्भ संस्कृत के नाटकों के अनुवाद से हुआ । पौराणिक कथनों के आधार पर मौलिक नाटकों की रचना में लेखनाथ पोड्याल, बालकृष्ण सम और भीमनिधि तिवारी का नाम उल्लेखनीय हैं । निबंध, उपन्यास,एकांकी एवं समीक्षा के क्षेत्र में भी नेपाली साहित्य समृद्ध है । अग्रपंक्ति के निबंधकारों में पारसमणि प्रधान, सूर्यविक्रम ज्ञवाली, रूद्रराज पाण्डेय, लक्ष्मीप्रसाद देवकोटा व बालकृष्ण सम के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इसके बाद के निबंधकारों में शंकर लामिछाने, राजेश्वर देवकोटा, बालचंद्र शर्मा आदि के नाम प्रमुख हैं ।

पिछले दशक में आकर नेपाली साहित्य उत्तर आधुनिक चिंतन से प्रभावित हुआ है । चिंतन, शैली और विषयों को अत्याधुनिक तरीके से साहित्य में प्रयोग किया जा रहा है । नेपाल प्रज्ञा प्रतिष्ठान और मदन पुरस्कार के स्थापना लगायत के अन्य साहित्यिक गतिविधियों ने भी नेपाली भाषा साहित्य की समृद्धि में अतुलनीय योगदान दिया है ।

भारतीय साहित्य में नेपाली भाषा साहित्य का योगदान :

वर्तमान समय में भारत में 179 भाषाएँ एवं 544 उपभाषाएँ हैं । भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में बाईस भाषाओँ को 'राजभाषा' का दर्जा प्राप्त है, जिसमें से एक नेपाली भाषा भी है । सन् 1992 मे नेपाली भाषा को भारत की 19 वीं राजभाषा के तौर पर शामिल कर लिया गया था । नेपाली साहित्य नेपाली भाषा का साहित्य अथवा नेपाली भाषा में रचित साहित्य है । यह भाषा नेपाल के अलावा भारत के सिक्किम, पश्चिम बंगाल, पूर्वोत्तर राज्यों आसाम, मणिपुर, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश तथा उत्तराखंड में भी बोली जाती है । सिक्किम भारत का एक ऐसा राज्य है जहाँ केवल नेपाली भाषा ही बोली जाती है । भारत के कई बड़े शहरों में भी मुख्यत: दिल्ली, कोलकाता, बैंगलोर एवं मुम्बई आदि में नेपाली भाषियों की बहुलता पायी जाती है ।भारत में भी नेपाली भाषा साहित्य भरपूर मात्रा में लिखा-पढ़ा जाता है । साहित्य अकादमी द्वारा प्रत्येक वर्ष भारतीय नेपाली साहित्यकारों द्वारा लिखे गए नेपाली भाषा

साहित्य व नेपाली भाषा में अनुदित साहित्य को प्रोत्साहित व पुरस्कृत किया जाता है । भारतीय साहित्य में नेपाली भाषा साहित्य का विशिष्ट योगदान है । जैसे पशुपतिनाथ के दर्शन किए बिना तमाम हिंदुओं की सभी तीर्थ यात्रा निरर्थक है, ठीक उसी तरह भारतीय साहित्य नेपाली भाषा साहित्य के बिना अपूर्ण है । भारतीय साहित्य की सम्पूर्ण पहचान नेपाली भाषा साहित्य के साथ नाखून और मांस के सम्बन्ध की तरह एक-दूसरे से जुड़ी हुई है । भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में कई नेपाली भाषियों का अतुलनीय योगदान है । दुर्गा मल्ल से लेकर राम सिंह ठकुरी व गोपाल सिंह नेपाली आदि ने हिन्दी और नेपाली भाषा में राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत गीत के माध्यम से भारतीय साहित्य की सेवा की है । भारतीय स्वतन्त्रता सेनानी दुर्गा मल्ल की प्रतिमा भारत के संसद भवन में लगी हुई है । भारतीय राष्ट्रीय गान जन-गण-मन को संगीतबद्ध करने का काम कप्तान राम सिंह ठकुरी ने किया था जो मूलत : नेपाल के थे । उन्होंनें 'कदम-कदम बढ़ाए जा' तथा 'शुभ सुख चौन' जैसे कई राष्ट्रीय भावना के गीतों को संगीतबद्ध किया तथा भारतीय स्वतन्त्रता सेनानियों को उत्प्रेरित करने के लिए अनेकों राष्ट्रभक्ति गीतों की रचना की। हिन्दी एवं नेपाली के प्रसिद्ध कवि गोपाल सिंह नेपाली ने 1962 के भारत-चीन युद्ध के दौरान कई देशभक्तिपूर्ण गीत एवं कविताएं लिखीं । 'पंछी','रागिनी', 'पंचमी','हमारी राष्ट्र वाणी'और 'हिमालय ने पुकारा' इनके काव्य और गीत संग्रह हैं। गोपाल सिंह नेपाली ने सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के साथ सुधा, योगी, रतलाम टाइम्स जैसी कई पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया । उन्होंने भारतीय चलचित्रों के लिए भी कई गीत लिखे तथा नजराना, सनसनी और खुशबू नाम के चलचित्रों का निर्माण भी किया ।

साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत नेपाली भाषा के साहित्यकारों की सूची

1991	गिरमी शेर्पा-हिपोक्रेट चाँप	– गुराँस र अन्य कविता	–कविता
1992	आर.पी. लामा.	– इंद्रधनुष	– निबंध
1993	गदुल सिंह लामा	– मृगतृष्णा	–लघु कथा
1994	जीवन नामडूंग	– पर्यवेक्षण	– निबंध
1995	नगेन्द्रमणि प्रधान	– डॉ. पारसमणिको जीवन यात्रा	– जीवनी
1996	मोहन ठकुरी	– निशब्द	– कविता
1997	मणि प्रसाद राई	– वीर जातिको अमर कहानी	–जीवनवृत
1998	मन प्रसाद सुब्बा	– आदिम बस्ती	– कविता
1999	बिक्रम बीर थापा	– बिसौं शताब्दीकी मोनालिसा	–लघु कथा
2000	रामलाल अधिकारी	– निसंस्मरण	– निबंध
2001	लखी देवी सुंदस	– आहात अनुभूति	– लघु कथा
2002	प्रेम प्रधान	– उदासीन रूखहरू	– उपन्यास
2003	बिनद्या सुब्बा	– अथाह	– उपन्यास
2004	जस योंजन 'प्यासी'	– शान्ति सन्देह	– कविता
2005	कृष्ण सिंह मोक्तान	– जीवन गोरेटोमा	– उपन्यास
2006	भीम दहाल	– द्रोह	– उपन्यास
2007	लक्षमण श्रीमल	– कर्फ्यू	– नाटक
2008	हेमनदास राई 'किरात'	– केही नमिलेका रेखाहरू	–लघु कथा
2009	समीरन छेत्री 'प्रियदर्शी'	– गैरीगाउँकी चेमेली	– लघु कथा
2010	गोपी नारायण प्रधान	– आकाशले पनिठाउँ खोजीरहेछ	–कविता

नेपाल में हिन्दी भाषा की स्थिति :

पौराणिक काल से ही नेपाल और भारत दो घनिष्ठ पड़ोसी देश हैं । दोनों देशों की भाषा, कला, साहित्य व संस्कृति में भी काफी समानताएँ पायी जाती हैं । नेपाल एक बहु भाषीय देश है । अत: यहाँ भी हिन्दी भाषा बोली जाती है । भारतीय सीमाओं से सटे नेपाल के तराई क्षेत्र में हिन्दी बोलने वालों की काफी संख्या है । अवधी, मैथिली, भोजपुरी के साथ-साथ तकरीबन अस्सी लाख लोग नेपाल में हिन्दी बोलते हैं । नेपालगंज, वीरगंज, महेन्द्रनगर, जनकपुर आदि नेपाल के हिन्दी भाषी क्षेत्र हैं । भारत के विभिन्न शहरों में रोजगार, शिक्षा व उपचार के लिए आने वाले नेपालियों के कारण ही हिन्दी भाषा नेपाल के पहाड़ी इलाकों तक पहुँची । हिन्दी सिनेमा और हिन्दी गानों का भी इसमें बहुत बड़ा योगदान है । नेपाल के सुदूर और दुर्गम क्षेत्रों में भी हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ाने में रेडियो नेपाल, नेपाल टेलिविजन, नेपाली एफ. एम. में प्रस्तुत किए जाने वाले हिन्दी के कई कार्यक्रमों का विशेष योगदान है । नेपाल के अधिकांश लोग हिन्दी भाषा आसानी से बोलते और समझते हैं । बिहार, उत्तर प्रदेश, दिल्ली तथा राजस्थान आदि राज्यों के लोगों की नेपाल में वैवाहिक व व्यापारिक अंतर संबंध होने से भी हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में बढ़ोतरी हुई । 1956 में नेपाल से 'नेपाली' नाम का हिन्दी दैनिक निकलना प्रारम्भ हुआ । नेपाली भाषी साहित्यकारों ने भी हिन्दी भाषा में कई अच्छी रचनाएँ की । लक्ष्मीप्रसाद देवकोटा, मोतीराम भट्ट, भवानी भिक्षु, केदारमान व्यथित, गोपाल सिंह नेपाली, राम हरि जोशी, यदुवंश लालचन्द्र, धीरेन्द्र मल्ल, शुक्रराज शास्त्री, घुस्वा सायमि, दुर्गा प्रसाद श्रेष्ठ आदि साहित्यकारों ने हिन्दी में अच्छी रचनाएँ कीं । हिन्दी साहित्य का भी इसमें काफी बड़ा योगदान रहा है। शरतचंद उपाध्याय, बंकीम चंद्र चट्टोपाध्याय, रवीन्द्र नाथ टैगोर, निर्मल वर्मा, केदारनाथ सिंह, अरुण कमल, आर. के. नारायण,हरिवंश राय बच्चन इत्यादि साहित्यकारों की नेपाल में इतनी

शेष पृष्ठ संख्या 13 पर

विश्वभाषा हिन्दी देश में अपना स्थान प्राप्त करके रहेगी

विश्वभाषा हिन्दी के संबंध में यह एक विचित्र तथ्य है कि उसने अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में जितनी प्रगति की है उतनी वह राष्ट्रीय स्तर पर नहीं कर पाई। इसका ज्वलंत प्रमाण यही है कि हिन्दी विश्व भाषा तो सरलता से बन गई किन्तु देश की राष्ट्रभाषा का वास्तविक दर्जा नहीं पा सकी। हिन्दी को विश्वभाषा बनाने में निम्नांकित कारणों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही-

1. हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन-देश विदेश में प्रकाशित होने वाले पत्र-पत्रिकाओं ने हिन्दी को विश्वभाषा बनाया। ये पत्र-पत्रिकाएँ भारत से विदेशों में और विदेशों से भारत में आती है। इनके माध्यम से हिन्दी भाषा और साहित्य का अच्छा खासा प्रचार विदेशों में हुआ। हमारी राष्ट्रभाषा प्रचार समितियाँ भी हिन्दी में श्रेष्ठ पत्रिकाएँ प्रकाशित कर रही है।

2. भारतीय हिन्दी फिल्मों का प्रदर्शन-भारतीय हिन्दी फिल्मों के प्रदर्शन ने भारत में ही नहीं विदेशों में भी हिन्दी का अच्छा खासा प्रचार किया। इनके मधुर गीतों ने तो लोगों को इन्हें झूमकर गाने के लिए मजबूर कर दिया।

3. विदेशी विश्वविद्यालयों में हिन्दी शिक्षण-विश्व के 145 विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन हो रहा है। इससे विश्व में हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ी है। जापान के 850 महाविद्यालयों, अमरीका के 75 विश्वविद्यालयों, इटली के 5 विश्वविद्यालयों, इंगलैंड के केम्ब्रिज, ऑक्सफोर्ड, यार्क एवं लंदन विश्वविद्यालयों, रूस के मानविकी एवं मास्को विश्वविद्यालयों, कोरिया के हांकुक एवं बुशान विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है।

4. इन्टरनेट पर हिन्दी का वर्चस्व-आज हिन्दी इन्टरनेट पर अपना वर्चस्व बढ़ाती जा रही है। अंग्रेजी के बाद आज जिस भाषा का इन्टरनेट पर वर्चस्व है, वह हिन्दी ही है। गूगल के मुख्य अधिकारी एरिक श्मिद के अनुसार भविष्य में अंतर जाल-इन्टरनेट की प्रमुख भाषा अंग्रेजी के साथ चीनी और हिन्दी होगी।

5. विश्व के टीवी चैनलों से हिन्दी के कार्यक्रमों का प्रसारण-भारत के आकाशवाणी और दूरदर्शन के अतिरिक्त विश्व के अनेक देशों के टीवी चैनलों से हिन्दी के कार्यक्रमों के प्रसारणों ने भी हिन्दी को विश्वभाषा बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

6. विश्व में हिन्दी बोलने वालों की संख्या-विश्व के 132 देशों में रहने वाला सवा करोड़ भारतीय हिन्दी बोलते है। डॉ. जयन्तीलाल नौटियाल के अनुसार विश्व में हिन्दी बोलनेवालों की संख्या एक अरब से भी अधिक है, अतः विश्व में हिन्दी प्रथम स्थान पर है। जबकि प्रो. महावीर शरण जैन, जो केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के निदेशक है, के अनुसार हिन्दी दूसरे स्थान पर है। विश्व में हिन्दी का तीसरा स्थान तो सभी को मान्य है। इससे विश्व में हिन्दी की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति का ज्ञान होता है।

7. विज्ञापनों में हिन्दी का प्रभुत्व- भूमंडलीकरण और बाजारवाद के कारण बहुराष्ट्रीय कंपनियों को सारी दुनियाँ में अपने उत्पाद बेचने की छूट मिल गई है। इसी कारण वे विश्व के सबसे बड़े बाजार भारत में अपने उत्पादों के विज्ञापन जारी कर रही है। भारत के लोग उनके विज्ञापनों को भली-भाँति समझ सकें इसलिए ये विज्ञापन हिन्दी में जारी किये जा रहे हैं। इस कारण भारत में विज्ञापनों पर हिन्दी का प्रभुत्व है।

8. कंप्यूटरीकरण हेतु देवनागरी सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि - कंप्यूटर कम्पनी के मालिक बिलगेट्स का अभिमत है कि हिन्दी विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि है। इसमें विश्व की सभी भाषाओं के लिप्यंतरण की क्षमता है। इसी से देवनागरी लिपि और उसके कारण हिन्दी की लोकप्रियता लगातार बढ़ रही है।

9 वर्धा में स्थित अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय और मॉरीशस में स्थित विश्व हिन्दी सचिवालय हिन्दी को विश्वभाषा बनाने में संलग्न है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी के पाठ्यक्रम तैयार करना, अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी पुस्तकालय का निर्माण, हिन्दी में शोधकार्य की व्यवस्था, पुस्तक मेलों का आयोजन आदि ऐसे कार्य हैं जिनसे हिन्दी को विश्व स्तर पर स्थापित होने में सहायता मिली है।

10 भारत के आकाशवाणी/दूरर्शन भी निरंतर हिन्दी को विश्व स्तर पर स्थापित करने में निरंतर संलग्न हैं।

11 उपरोक्त कारणों से हिन्दी एक विश्वभाषा के रूप में स्थापित को चुकी है। यह विश्वभाषा हिन्दी भारत में भी अपना स्थान प्राप्त करके रहेगी। चाहे उसकी प्रगति के मार्ग में कितने ही रोड़े क्यों न अटकाए जाये। यह कितनी बड़ी विडंवना है कि जब हम गुलाम थे तब हमारी भाषा आजाद थी और जब हम आजाद हुए तब हमारी भाषा गुलाम हो गई। इससे भी बड़ी विडंबना यह है कि हम तो विदेशी ताकत के गुलाम थे लेकिन हमारी भाषा-हिन्दी देशी ताकत की गुलाम है। हमारे ही नेताओं, नौकरशाहों और तकनीकीशाहों ने इसके पैरों में बेड़ियाँ डाल रखी है ताकि यह तेजी से आगे न बढ़ सके। लेकिन उनका यह प्रयास बाढ़ में आई नदी को बाँधने जैसा है। वह समय दूर नहीं जब हिन्दी इस बेड़ी और बाँध को तोड़ कर आगे निकल जायेगी। यह इसलिए होगा क्योंकि प्रजातंत्र में जनता स्वामी

होती है और मंत्री, नौकरशाह तथा तकनीकीशाह नौकर । लेकिन ऊँचे पदों पर प्रतिष्ठित होकर अहंकार के नशे में चूर वे लोग स्वयं को मालिक और जनता को नौकर समझकर अपनी मरजी उस पर लाद रहे हैं- लेकिन यह स्थिति अधिक समय तक रहनेवाली नहीं है। निम्नांकित शक्तियाँ और परिस्थितियाँ राष्ट्रभाषा हिन्दी के पक्ष में वातावरण निर्मित कर रही हैं–

1. हमारे पूर्व प्रधानमंत्री श्री मनमोहन सिंह जी ने अपने कार्यकाल के दौरान घोषणा की थी कि भारत सरकार हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बनाने के लिए संकल्पित है। लेकिन इसमें केवल प्रारंभिक तीन वर्षों में 20 मिलियन डालर का खर्च मात्र नहीं उठाना है बल्कि तीन मानवीय शर्तों का भी पालन करना है। वे शर्ते हैं-. हमारे राजनेता और राजनयिक देश–विदेश में हिन्दी का उपयोग करें। 2.हमारे दूतावास हिन्दी में काम करें। 3.हमें संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्यों के सामान्य बहुमत का समर्थन प्राप्त हो। पहली दो शर्तों की पूर्ति के लिए कठोर निर्णय लेने होंगे। 10 जनवरी को सारे विश्व में हिन्दी दिवस मनाया जाना भी हिन्दी के विश्वभाषा होने का प्रमाण है।

2. विज्ञान, विधि और तकनीकी शब्दों के शब्दकोश तैयार हो चुके हैं। ऐसी दशा में उच्च स्तरीय विज्ञान, विधि और तकनीकी शिक्षा कभी भी हिन्दी में प्रारंभ की जा सकती है।

3. हिन्दी प्रदेशों के राज्यपाल उच्च न्यायालयों में हिन्दी के प्रयोग को प्राधिकृत कर सकते हैं। उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश आदि प्रदेशों ने ऐसा किया भी है। संसदीय राजभाषा समिति ने उच्च न्यायालयों एवं उच्चतम न्यायालय में काम हिन्दी में प्रारंभ करने का प्रस्ताव भारत सरकार को भेजा है।

4. केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति, संसदीय राजभाषा समिति, विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति जैसी समितियाँ हिन्दी को राजभाषा बनाने हेतु उसके प्रसार–प्रचार में जोर–शोर से लगी हुई हैं। इसके अतिरिक्त देशभर में राष्ट्रभाषा प्रचार समितियाँ भी हिन्दी के प्रचार–प्रसार में लगी हुई हैं। इनमें भी गैर हिन्दी क्षेत्र की समितियों का कार्य अधिक व्यवस्थित एवं सराहनीय रहा है।

5. हिन्दी की श्रीवृद्धि में क्षेत्रीय भाषाओं का योगदान भी कम नहीं है। क्षेत्रीय भाषाओं से हिन्दी में और हिन्दी में क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद भी हिन्दी की श्रीवृद्धि में सहयोगी है। इसमें और अधिक समन्वय की आवश्यकता है।

6. हवाई जहाजों में भी अब अंग्रेजी के साथ हिन्दी का प्रयोग और प्रभाव बढ़ रहा है। उपरोक्त कारणों से वह दिन बहुत दूर नहीं जब विश्वभाषा हिन्दी देश में अपना स्थान प्राप्त करके रहेगी।

डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल'
1436/बी, सरस्वती कॉलोनी, चेरीताल वार्ड, जबलपुर-482002 (म.प्र.)
मो. : 9425899232

पृष्ठ संख्या 11 का शेष

लोकप्रियता है कि नेपाली पाठक व साहित्यकार भी उनकी किताबें खोज–खोज कर पढ़ते हैं । साथ ही अनुवाद साहित्य के माध्यम से भी लोग हिन्दी से जुड़े हुए हैं । हिन्दी अखबारों और पत्रिकाओं की ही देन है कि नेपाली पाठकगण किसी न किसी रूप से हिन्दी भाषा से जुड़े रहे । भारतीय सिनेमा में काम करने वाले नेपाली कलाकारों की बदौलत नेपाल में हिन्दी भाषा की लोकप्रियता और भी ज्यादा बढ़ गयी है । जहाँ पुरानी पीढ़ी हिन्दी नगमों, गजलों तक ही सीमित थी तो वहीं आज नई पीढ़ी और विशेषकर युवा वर्ग बाकायदा हिन्दी भाषा सीखकर भारतीय सिनेमा और टेली चलचित्रों में काम कर रहें हैं । बच्चों के मनोरंजनात्मक कार्टून चौनल और बाल साहित्य की पुस्तकें भी नेपाली बाजारों में काफी लोकप्रिय हैं । नेपाल के पूर्व प्रधानमंत्री और साहित्यकार लोकेन्द्र बहादुर चन्द ने कहा था कि नेपाल में हिन्दी भाषा को बढ़ावा देना चाहिए । नेपाल में हिन्दी काफी समय से प्रचलित है। हिन्दी और नेपाली दोनों भाषाओं को समान रूप से प्रोत्साहित करने की जरूरत है । नेपाल प्रज्ञा प्रतिष्ठान की वार्षिक पत्रिका 'रूपान्तरण' में हिन्दी भाषा की अनुवाद सामग्रियों का प्रकाशन होता है । यह पत्रिका विशेषकर हिन्दी भाषा के लिए ही समर्पित है । इसी तरह नेपाल से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'हिमालिनी' ही एक मात्र हिन्दी पत्रिका है । पंडित दीप नारायण मिश्र जी द्वारा स्थापित वीरगंज स्थित संस्था 'नेपाल हिन्दी साहित्य परिषद' नेपाल में हिन्दी भाषा के प्रचार–प्रसार के लिए कार्य कर रही है । काठमाण्डू स्थित नेपाल–भारत पुस्तकालय भी हिन्दी के प्रचार–प्रसार और नेपाली साहित्यकारों के साथ भाषा के समन्वय के लिए उल्लेखनीय कार्य करता है । राजनीतिक मामलों में भी नेपाल में हिन्दी भाषा को लेकर काफी विवाद हुए हैं । एक समय ऐसा भी था जब नेपाल में हिन्दी भाषा को नेपाल की दूसरी राजभाषा के रूप में अपनाने के लिए पहल की जा रही थी, लेकिन राजनीतिक विवादों के कारण इसे अस्वीकार किया गया । नेपाल के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. परमानन्द झा ने जुलाई 2008 में अपने पद का शपथ ग्रहण हिन्दी में लिया था । फलस्वरूप नेपाल में इसे लेकर काफी विवाद रहा । लोगों ने पाँच दिनों तक सड़कों पर विरोध प्रदर्शन किया साथ ही पुतले भी जलाए गए । नेपाल के उच्चतम न्यायालय ने 2009 में फैसला सुनाया कि हिन्दी में शपथ अवैध है । अंततः परमानन्द झा ने नेपाली और अपनी मातृभाषा मैथिली में 7 फरवरी, 2010 को शपथ लेकर इस विवाद को समाप्त किया । परमानन्द झा ने ही 2015 में माँग की थी कि हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ की छः आधिकारिक भाषाओं में से एक भाषा का दर्जा मिलना चाहिए । इससे यह ज्ञात होता है कि केवल आम बोलचाल की भाषा, शिक्षा और साहित्य तक ही हिन्दी भाषा की नेपाल में स्वीकार्यता प्राप्त है ।

–राजकुमार श्रेष्ठ

इसलिए विदा करना चाहते हैं, हिन्दी को हिन्दी के कुछ अखबार

दुनिया की हर भाषा की जिंदगी में एक बार कोई निहायत ही निष्करुण वक्त दबे पाँव आता है और 'उसको बोलने वालों' के हलक में हाथ डालकर उनकी जुबान पर रचे-बसे शब्दों को दबोचता है और धीरे-धीरे उनके कोमल गर्भ में साँस ले रहे अर्थों का गला घोंट देता है। एक तरफ वह 'पवित्र को ध्वंस' में धकेलता है तो दूसरी तरफ वह 'अतीत में आग' लगाता हुआ, चौतरफा भय और निराशा फैला देता है। ऐसे ही वक्त के खिलाफ अंततः मंगल पांडे की बंदूक से गोली निकलती है और 1857 का गदर (?) मच जाता है। ...आज हम फिर 1857 के ही निकट पहुँच गए हैं। वे तब ये कहते हुए आए थे : 'हम, तुम असभ्यों को सभ्य बनाने के लिए तुम्हारे देश में घुस रहे हैं।' मगर इस बार वे कह रहे हैं : 'हम, तुम कंगलों को संपन्न बनाने के लिए तुम्हारे यहाँ आ रहे हैं।' ...सुनो, हम जिस 'पूँजी का प्रवाह' शुरू कर रहे हैं, वह तुम्हारे यहाँ समृद्धि लाएगी। ...लेकिन, हकीकत में यह देश को समृद्ध नहीं बल्कि, एक किस्म के 'सांस्कृतिक-अनाथालय' में बदलने की युक्ति है। वे धीरे-धीरे आपसे आपकी बोलियाँ और भाषा छीन रहे हैं - तिस पर विडंबना यह है कि उनके इस काम में हमारे कुछ अखबार भी तन-मन-धन से जुट गए हैं।

बहरहाल, प्रस्तुत हैं इसी मुद्दे को लेकर जिरह छेड़ते कुछ ज्वलंत सवाल :

भारत इन दिनों दुनिया के ऐसे समाजों की सूची के शीर्ष पर हैं, जिस पर बहुराष्ट्रीय निगमों की आसक्त और अपलक आँख निरंतर लगी हुई है। यह उसी का परिणाम है कि चिकने और चमकीले पन्नों के साथ लगातार मोटे होते जा रहे हिन्दी के लगभग सभी दैनिक समाचार पत्रों के पृष्ठों पर, एकाएक भविष्यवादी चिंतकों की एक नई नस्ल अंग्रेजी की माँद से निकलकर, बिला नागा, अपने साप्ताहिक स्तंभों में आशावादी मुस्कान से भरे अपने छायाचित्रों के साथ आती है- और हिन्दी के मूढ़ पाठकों को गरेबान पकड़कर समझाती है कि तुम्हारे यहाँ हिन्दी में अतीतजीवी अंधों की बूढ़ी आबादी इतनी अधिक हो चुकी है कि उनकी बौद्धिक-अंत्येष्टि कर देने में ही तुम्हारी बिरादरी का मोक्ष है। दरअस्ल कारण यह कि वह बिरादरी अपने 'आप्तवाक्यों' में हर समय 'इतिहास' का जाप करती रहती है और इसी के कारण तुम आगे नहीं बढ़ पा रहे हो। इतिहास ठिठककर तुम्हें पीछे मुड़कर देखना सिखाता है, इसलिए वह गति-अवरोधक है। जबकि भविष्यातुर रहने वाले लोगों के लिए गरदन मोड़कर पीछे देखना तक वर्ज्य है। एकदम निषिद्ध है। ऐसे में बार-बार इतिहास के पन्नों में रामशलाका की तरह आज के प्रश्नों के भविष्यवादी उत्तर बरामद कर सकना असंभव है। हमारी सुनो, और जान लो कि इतिहास एक रतौंध है, तुमको उससे बचना है। हिस्ट्री इज बंक। वह बकवास है। उसे भूल जाओ।

बहरहाल - 'अगर मगर मत कर'। 'इधर उधर मत तक'। 'बस सरपट चल।' भविष्यवाद का यह नया सार्थक और अग्रगामी पाठ है।

प्रभु जोशी

जबकि, इस वक्त की हकीकत यह है कि हमारे भविष्य में हमारा इतिहास एक घुसपैठिये की तरह हरदम मौजूद रहता है। उससे विलग, असंपृक्त और मुक्त होकर रहा ही नहीं जा सकता। इतिहास से मुक्त होने का अर्थ स्मृति-विहीन हो जाना है - सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से अनाथ हो जाना है।

लेकिन, वे हैं कि बार-बार बताए चले जा रहे हैं कि तुम्हारे पास तुम्हारा इतिहास-बोध तो कभी रहा ही नहीं है। और जो है, वह तो इतिहास का बोझ है। तुम लदे हुए हो। तुम अतीत के कुली हो और फटे-पुराने कपड़ों में लिपटे हुए अपना पेट भर पालने की जद्दोजहद में हो, जबकि ग्लोबलाइजेशन की फ्यूचर एक्सप्रेस प्लेटफार्म पर खड़ी है और सीटी बजा चुकी है। इसलिए, तुम इतिहास के बोझ को अविलंब फेंको और इस ट्रेन पर लगे हाथ चढ़ जाओ।

जी हाँ, अधीरता पैदा करने वाली नव उपनिवेशवाद की यही वह मोहक और मारक ललकार है, जो कहती है कि अब 'आगे' और 'पीछे' सोचने का समय नहीं है। अलबत्ता, हम तो कहते हैं कि अब तो 'सोचने' का काम तुम्हारा है ही नहीं। वह तो हमारा है। हम ही सोचेंगे तुम्हारे बारे में। अब हमें ही तो सब कुछ तय करना है तुम्हारे बारे में। याद रखो, हमारे पास वह छैनी है, जिस के सामने पत्थर को भी तय करना पड़ता कि वह क्या होना चाहता है- घोड़ा या कि साँड़। उस छैनी से यदि हम तुम्हें घोड़ा बनाएँगे तो निश्चय ही रेस का घोड़ा बनाएँगे। यदि हमें साँड़ बनाना होगा तो तुम्हें वो साँड़ बनाएँगे, जो अर्थव्यवस्था को सींग पर उछालता हुआ सेंसेक्स के ग्राफ में सबसे ऊपर डुँकारता हुआ दिखाई पड़ेगा।

इन्हीं चिंतकों की इसी नई नस्ल ने, हिन्दी के तमाम दैनिक अखबारों के पन्नों पर रोज-रोज लिख लिखकर सारे देश की आँख उस तरफ लगा दी है, जहाँ विकास दर का ग्राफ बना हुआ है और उसमें दर-दर की ठोकरें खाता आम आदमी देख रहा है कि येल्लो, उसने छह, सात, आठ और अब तो नौ के अंक को छू लिया है। इसी दर के लिए ही तमाम दरों-दीवारों को तोड़कर महाद्वार बनाया जा रहा है। इसे ही ओपन-डोअर-पॉलिसी कहते हैं। और, कहने की जरूरत नहीं कि चिंतकों की ये फौज, इसी ओपन-डोअर से दाखिल हुई है। यही उसकी द्वारपाल है, जो घोषणा कर रही है कि तुम्हारे यहाँ मही (पृथ्वी) पाल आ रहे हैं। तुम्हारे यहाँ विश्वेश्वर आ रहे हैं। दौड़ो और उनका स्वागत करो। तुमने तो आपातकाल का भी स्वागत किया था, तो इसका 'स्वागत' करने में क्या हर्ज है? मजेदार बात यह कि इसके स्वागत में, इसकी अगवानी में, सबसे पहले शामिल है, हिन्दी के अखबार। वे बाजा फूँक रहे हैं और फूँकते-फूँकते बाजारवाद का बाजा बन गए हैं। ये अखबार पहले विचार देते थे। विचार की पूँजी

देते थे, लेकिन अब पूँजी का विचार देने में जुट गए हैं। एक अल्प-उपभोगवादी भारतीय प्रवृत्ति को पूरी तरह उपभोक्तावादी बनाने की व्यग्रता से भरने में जी-जान से जुट गए हैं, ताकि भूमंडलीकरण के कर्णधारों तथा अर्थव्यवस्था के महाबलीश्वरों के आगमन में आने वाली अड़चनें ही खत्म हो जाएँ और इन अड़चनों की फेहरिस्त में वे तमाम चीजें आती हैं, जिनसे राष्ट्रीयता की गंध आती हो।

कहना न होगा कि इसमें इतिहास, संस्कृति और सभी भारतीय भाषाएँ शीर्ष पर हैं। फिर हिन्दी से तो 'राष्ट्रीयता' की सबसे तीखी गंध आती है। नतीजतन भूमंडलीकरण की विश्व-विजय में सबसे पहले निशाने पर हिन्दी ही है। इसका एक कारण तो यह भी है कि यह हिंदुस्तान में संवाद, संचार और व्यापार की सबसे बड़ी भाषा बन चुकी है। दूसरे इसको राजभाषा या राष्ट्रभाषा का पर्याय बना डालने की संवैधानिक भूल गांधी की उस पीढ़ी ने कर दी, जो यह सोचती थी कि कोई भी मुल्क अपनी राष्ट्रभाषा के अभाव में स्वाधीन बना नहीं रह सकता। चूँकि भाषा संप्रेषण का माध्यम भर नहीं, बल्कि चिंतन प्रक्रिया एवं ज्ञान के विकास और विस्तार का भी हिस्सा होती है। उसके नष्ट होने का अर्थ एक समाज, एक संस्कृति और एक राष्ट्र का नष्ट हो जाना है। वह प्रकारांतर से राष्ट्रीय एवं जातीय-अस्मिता का प्रतिरूप भी है। इस अर्थ में, भाषा उस देश और समाज की एक विराट ऐतिहासिक धरोहर भी है। अतः उसका संवर्द्धन और संरक्षण एक अनिवार्य दायित्व है।

जब देश में सबसे पहले मध्यप्रदेश के एक स्थानीय अखबार ने विज्ञापनों को हड़पने की होड़ में, बाकायदा सुनिश्चित व्यावसायिक रणनीति के तहत अपने अखबार के कर्मचारियों को हिन्दी में 40 प्रतिशत अंग्रेजी के शब्दों को मिलाकर ही किसी खबर के छापे जाने के आदेश दिए और इस प्रकार हिन्दी को समाचार पत्र में हिंग्लिश के रूप में चलाने की शुरुआत की तो मैंने अपने पर लगने वाले संभव आरोप मसलन प्रतिगामी, अतीतजीवी अंधे, राष्ट्रवादी और फासिस्ट आदि जैसे लांछनों से डरे बिना एक पत्र लिखा। जिसमें, मैंने हिन्दी को हिंग्लिश बना कर दैनिक अखबार में छापे जाने से खड़े होने वाले भावी खतरों की तरफ इशारा करते हुए लिखा- प्रिय भाई, हमने अपनी नई पीढ़ी को बार-बार बताया और पूरी तरह उसके गले भी उतारा कि अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति ने ही हमें ढाई सौ साल तक गुलाम बनाए रक्खा। दरअसल, ऐसा कहकर हमने एक धूर्त - चतुराई के साथ अपनी कौम के दोगलेपन को इस झूठ के पीछे छुपा लिया। जबकि, इतिहास की सचाई तो यही है कि गुलामी के विरुद्ध आजादी की लड़ाई लड़ने वाले नायकों को, अंग्रेजों ने नहीं, बल्कि हमीं ने मारा था। आजादी के लिए 'आग्रह' या 'सत्याग्रह' करने वाले भारतीयों पर क्रूरता के साथ लाठियाँ बरसाने वाले बर्बर हाथ, अंग्रेजों के नहीं, हम हिन्दुस्तानी दारोगाओं के ही होते थे। अपने ही देश के वासियों के ललाटों को लाठियों से लहू-लुहान करते हुए हमारे हाथ जरा भी नहीं काँपते थे। कारण यह कि हम चाकरी बहुत वफादारी से करते हैं और यदि वह गोरी चमड़ी वालों की हुई तो फिर कहने ही क्या?

पूछा जा सकता है कि इतने निर्मम और निष्करुण साहस की वजह क्या थी? तो कहना न होगा कि दुनिया भर के मुल्कों के दरमियान 'सारे जहाँ से अच्छा' ये हमारा ही वो मुल्क है, जिसके वाशिंदों को बहुत आसानी से और सस्ते में खरीदा जा सकता है। देश में जगह-जगह घटती आतंकवादी गतिविधियों की घटनाएँ, हमारे ऐसे चरित्र का असंदिग्ध प्रमाणीकरण करती हैं। दूसरे शब्दों में हम आत्म-स्वीकृति कर लें कि 'भारतीय', सबसे पहले 'बिकने' और 'बेचने' के लिए तैयार हो जाता है और, यदि वह संयोग से व्यवसायी और व्यापारी हुआ तो सबसे पहले जिस चीज का सौदा वह करता है, वह होता है उसका जमीर। बाद इस सौदे के, उसमें किसी भी किस्म की नैतिक-दुविधा शेष नहीं रह जाती है और 'भाषा, संस्कृति और अस्मिता' आदि चीजों को तो वह खरीददार को यों ही मुफ्त में बतौर भेंट के दे देता है। ऐसे में यदि कोई हिंसा के लिए भी सौदा करे तो उसे कोई अड़चन अनुभव नहीं होती है। फिर वह हिंसा अपने ही 'शहर', 'समाज', या 'राष्ट्र' के खिलाफ ही क्यों न होने जा रही हो।

बहरहाल, मेरे प्यारे, भाई अब ऐसी हिंसा सुनियोजित और तेजगति के साथ हिन्दी के खिलाफ शुरू हो चुकी है। इस हिंसा के जरिए भाषा की हत्या की सुपारी आपके अखबार ने ले ली है। वह भाषा के खामोश हत्यारे की भूमिका में बिना किसी तरह का नैतिक-संकोच अनुभव किए खासी अच्छी उतावली के साथ उतर चुका हैं। उसे इस बात की कोई चिंता नहीं कि एक भाषा अपने को विकसित करने में कितने युग लेती है। (डेविड क्रिस्टल तो एक शब्द की मृत्यु को एक व्यक्ति की मृत्यु के समान मानते हैं। अंग्रेजी कवि ऑडेन तो बोली के शब्दों को इरादतन अपनी कविता में शामिल करते थे कि कहीं वे शब्द मर न जाएँ- और महाकवि टी.एस. एलियट प्राचीन शब्द, जो शब्दकोष में निश्चेष्ट पड़े रहते थे, को उठाकर समकालीन बनाते थे कि वे फिर से साँस लेकर हमारे साथ जीने लगे।) आपको, श्शब्दश की तो छोड़िए, 'भाषा' तक की परवाह नहीं है, लगता है आप हिन्दी के लिए हिन्दी का अखबार नहीं चला रहे हैं, बल्कि अंग्रेजी के पाठकों की नर्सरी का काम कर रहे हैं। आप हिन्दी के डेढ़ करोड़ पाठकों का समुदाय बनाने का नहीं, बल्कि हिन्दी के होकर हिन्दी को खत्म करने का इतिहास रचने जा रहे हैं। आप 'धंधे में धुत्त' होकर जो करने जा रहे हैं, उसके लिए आपको आने वाली पीढ़ी कभी माफ नहीं करेगी। आपका अखबार उस सर्प की तरह है, जो बड़ा होकर अपनी ही पूँछ अपने मुँह में ले लेता है और खुद को ही निगलने लगता है। आपका अखबार हिन्दी का अखबार होकर, हिन्दी को निगलने का काम करने जा रहा है। जो कारण जिलाने के थे, वे ही कारण मारने के बन जाएँ, इससे बड़ी विडंबना भला क्या हो सकती है? यह आशीर्वाद देने वाले हाथों द्वारा बढ़कर गरदन दबा दिए जाने वाली जैसी कार्यवाही है। कारण कि हिन्दी के पालने-पोसने और या कहें कि उसकी पूरी परवरिश करने में हिन्दी पत्रकारिता की बहुत बड़ी भूमिका रही आई है।

जबकि, आपको याद होना चाहिए कि सामाजिक-राजनीतिक दृष्टि से उपजी 'भाषा-चेतना' ने इतिहास में कई-कई लंबी लड़ाइयाँ लड़ी हैं। इतिहास के पन्ने पलटेंगे तो आप पाएँगे कि आयरिश लोगों ने अंग्रेजी के खिलाफ बाकायदा एक निर्णायक लड़ाई लड़ी, जबकि उनकी तो लिपि में भी भिन्नता नहीं थी। फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश आदि भाषाएँ अंग्रेजी के साम्राज्यवादी वर्चस्व के विरुद्ध न केवल इतिहास में, अपितु इस 'इंटरनेट युग' में भी फिर नए सिरे से लड़ना शुरू कर चुकी हैं। इन्होंने कभी अंग्रेजी के सामने समर्पण नहीं किया।

बहरहाल मेरे इस पत्र का उत्तर अखबार मालिक ने तो नहीं ही दिया, और वे भला देते क्या? और देते भी क्यों? सिर्फ उनके संपादक और मेरे अग्रज ने कहा कि हिन्दी में कुछ जनेऊधारी तालिबान पैदा हो गए हैं, जिससे हिन्दी के विकास को बहुत बड़ा खतरा हो गया है। यह संपादकीय चिंतन नहीं अखबार के कर्मचारी की विवश टिप्पणी थी। क्योंकि उनसे तुरंत कहा जाएगा कि श्रीमान आप अपने हिन्दी प्रेम और नौकरी में से कोई एक को चुन लीजिए।

बहरहाल, अखबार ने इस अभियान को एक निर्लज्ज अनसुनी के साथ जारी रखा और पिछले सालों से वे निरंतर अपने संकल्प में जुटे हुए हैं। और अब तो हिन्दी में अंग्रेजी की अपराजेयता का बिगुल बजाते बहुराष्ट्रीय कंपनियों के दलालों ने, विदेशी पूँजी को पचा कर मोटे होते जा रहे, हिन्दी के लगभग सभी अखबारों को यह स्वीकारने के लिए राजी कर लिया है कि इसकी नागरी-लिपि को बदल कर, रोमन करने का अभियान छेड़ दीजिए और वे अब इस तरफ कूच कर रहे हैं। उन्होंने इस अभियान को अपना प्राथमिक एजेंडा बना लिया है। क्योंकि बहुराष्ट्रीय निगमों की महाविजय, इस सायबर युग में रोमन लिपि की पीठ पर सवार होकर ही बहुत जल्दी संभव हो सकती है। यह विजय अश्वों नहीं, चूहों की पीठ पर चढ़कर की जानी है। जी हाँ, कंप्यूटर माऊस की पीठ पर चढ़कर।

अंग्रेजों की बौद्धिक चालाकियों का बखान करते हुए एक लेखक ने लिखा था- अंग्रेजों की विशेषता ही यही होती है कि वे आपको बहुत अच्छी तरह से यह बात गले उतार सकते हैं कि आपके हित में आप स्वयं का मरना बहुत जरूरी है। और, वे धीरे-धीरे आपको मौत की तरफ ढकेल देते हैं। ठीक इसी युक्ति से हिन्दी के अखबारों के चिकने और चमकीले पन्नों पर नई नस्ल के ये चिंतक यही बता रहे हैं कि हिन्दी का मरना, हिंदुस्तान के सामाजिक-आर्थिक हित में बहुत जरूरी हो गया है। यह काम देश सेवा समझकर जितना जल्दी हो सके करो, वर्ना, तुम्हारा देश ऊपर उठ ही नहीं पाएगा। परिणाम स्वरूप वे हिन्दी को विदा कर देश को ऊपर उठाने के लिए कटिबद्ध हो गए हैं।

ये हत्या की अचूक युक्तियाँ भी बताते हैं, जिससे भाषा का बिना किसी हल्ला-गुल्ला किए 'बाआसानी संहार' किया जा सकता है।

वे कहते हैं कि हिन्दी का हमेशा-हमेशा के लिए खात्मा करने के लिए आप अपनाइए... 'प्रॉसेस ऑफ कॉण्ट्रा-ग्रेज्युअलिजम'। अर्थात, बाहर पता ही नहीं चले कि भाषा को श्सायासश बदला जा रहा है। बल्कि, 'बोलने वालों' को लगे कि यह तो एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है और म.प्र. के कुछ अखबारों की भाषा में, यह परिवर्तन उसी प्रक्रिया के तहत हो रहा है। बहरहाल, इसका एक ही तरीका है कि अपने अखबार की भाषा में आप हिन्दी के मूल दैनंदिन शब्दों को हटाकर, उनकी जगह अंग्रेजी के उन शब्दों को छापना शुरू कर दो, जो बोलचाल की भाषा में शेयर्ड-वकैब्युलरी की श्रेणी में आते हैं। जैसे कि रेल, पोस्ट कार्ड, मोटर, टेलिविजन, रेडियो, आदि-आदि।

इसके पश्चात धीरे-धीरे इस शेयर्ड वकैब्युलरि में रोज-रोज अंग्रेजी के नए शब्दों को शामिल करते जाइए। जैसे माता-पिता की जगह छापिए पेरेंट्स / छात्र-छात्राओं की जगह स्टूडेंट्स / विश्वविद्यालय की जगह यूनिवर्सिटी / रविवार की जगह संडे / यातायात की जगह ट्रेफिक आदि-आदि। अंततः उनकी तादाद इतनी बढ़ा दीजिए कि मूल भाषा के केवल कारक भर रह जाएँ। क्योंकि कुल मिलाकर रोजमर्रा के बोलचाल में बस हजार-डेढ़ हजार शब्द ही तो होते हैं।

यह चरण, 'प्रोसेस ऑव डिसलोकेशन' कहा जाता है। यानी की हिन्दी के शब्दों को धीरे-धीरे बोलचाल के जीवन से उखाड़ते जाने का काम।

ऐसा करने से इसके बाद भाषा के भीतर धीरे-धीरे 'स्नोबॉल थियरी' काम करना शुरू कर देगी-अर्थात बर्फ के दो गोलों को एक दूसरे के निकट रख दीजिए, कुछ देर बाद वे घुल-मिलकर इतने जुड़ जाएँगे कि उनको एक दूसरे से अलग करना संभव नहीं हो सकेगा। यह थियरी (रणनीति) भाषा में सफलता के साथ काम करेगी और अंग्रेजी के शब्द हिन्दी से ऐसे जुड़ जाएँगे कि उनको अलग करना मुश्किल होगा। यहाँ तक 'कि वे मूल से कहीं ज्यादा अपनी उपस्थिति का दावा करेंगे।'

इसके पश्चात शब्दों के बजाय पूरे के पूरे अंग्रेजी के वाक्यांश छापना शुरू कर दीजिए। अर्थात इनक्रीज द चंक ऑफ इंग्लिश फ्रेजेज। मसलन आऊट ऑफ रीच / बियांड डाउट / नन अदर देन / आदि आदि। कुछ समय के बाद लोग हिन्दी के उन शब्दों को बोलना ही भूल जाएँगे। उदाहरण के लिए हिन्दी में गिनती स्कूल में बंद किए जाने से हुआ यह है कि यदि आप बच्चे को कहें कि अड़सठ रुपये दे दो, तो वह अड़सठ का अर्थ ही नहीं समझ पायेगा, जब तक कि उसे अंग्रेजी में सिक्सटी एट नहीं कहा जाएगा। इस रणनीति के तहत बनते भाषा रूप का उदाहरण एक स्थानीय अखबार से उठाकर दे रहा हूं।

'मार्निंग आवर्स के ट्रेफिक को देखते हुए, डिस्ट्रिक्ट एडमिनिस्ट्रेशन ने जो ट्रेफिक रूल्स अपने ढंग से इंप्लीमेंट करने के लिए जो जेनुइन एफर्ट्स किए हैं, वो रोड को प्रोन टू एक्सीडेंट बना रहे हैं। क्योंकि, सारे व्हीकल्स लेफ्ट टर्न लेकर यूनिवर्सिटी की रोड को ब्लॉक कर देते हैं। इन प्रॉब्लम का इमीडिएट सोल्यूशन मस्ट है।'

इस तरह की भाषा के लगातार पाँच-दस वर्ष तक प्रिंट माध्यम से पढ़ते रहने के बाद होगा यह कि अखबार के खासकर युवा पाठक की यह स्थिति होगी कि उसे कहा जाय कि वह हिन्दी में बोले तो वह गूँगा हो जाएगा। उनकी इस युक्ति को वे कहते हैं 'इल्यूजन ऑफ स्मूथ ट्रांजिशन'। अर्थात हिन्दी की जगह अंग्रेजी को निर्विघ्न ढंग से स्थापित करने को सफल छद्म की अंतिम और अचूक पायदान - हिन्दी का हिंग्लिश में बदल जाना।

हिन्दी को इसी तरीके से हिन्दी के अखबारों में 'हिंग्लिश' बनाया जा रहा है। समझ के अभाव में लोग इस सारे सुनियोजित एजेंडे को भाषा के परिवर्तन की ऐतिहासिक प्रकिया ही मानने लगे हैं और हिन्दी में यह होने लगा है। गाहे-ब-गाहे लोग बाकायदा इस तरह इसकी व्याख्या भी करते हैं। अपनी दर्पस्फीत मुद्रा में वे बताते हैं, जैसे कि वे अपनी एक गहरी सार्वभौम प्रज्ञा के सहारे ही इस सचाई को सामने रख रहे हों कि हिन्दी को हिंग्लिश बनना अनिवार्य है। उनको तो पहले से ही इसका इल्हाम हो चुका है और ये तो होना ही है। यह नियति है, निर्विकल्प। इससे बचा नहीं जा सकता। इससे बचने का अब कोई रास्ता ही नहीं है।

यह टेक्नोलॉजिकल-डिटरमिनिज्म की तरह बनाया और बताया जा रहा है कि इंटरनेट के सामने तुम्हारी वही स्थिति है, जो शेर के सामने बकरी की। अब साहित्य को कसाईखाना कहने और बताने के दिन लद गए। अब तो यह इंटरनेटी युग ही कसाईखाना है। तुम केवल हलाक होने की विधि जरूर चुन सकते हो। या तो श्हलालश या फिर 'झटका'। 'झटका' विधि यही है कि पहली कक्षा से अंग्रेजी शुरू कर दो।

आप को यह याद ही होगा कि एक भली चंगी भाषा से उसके रोजमर्रा के साँस लेते शब्दों को हटाने और उसके व्याकरण को छीन कर उसे बोली में बदल दिए जाने को क्रियोल कहते हैं। अर्थात हिन्दी का हिंग्लिश बनाना एक तरह से उसका क्रियोलीकरण करना है। और कांट्रा-ग्रेजुअलिज्म के हथकंडों से, बाद में उसे डि-क्रियोल किया जाएगा। डिक्रियोल करने का अर्थ, उसे पूरी तरह अंग्रेजी के द्वारा विस्थापित कर देना।

भाषा की हत्या के एक नव-उपनिवेषी योजनाकार ने, अगले और अंतिम चरण को कहा है कि फायनल असाल्ट ऑन हिन्दी बनाम हिन्दी को नागरी लिपि के बजाय रोमन-लिपि में छापने की शुरुआत करना। अर्थात हिन्दी पर अंतिम प्राणघातक प्रहार। बस हिन्दी की हो गई अंत्येष्टि। चूँकि हिन्दी को रोमन में लिख पढ़कर बड़ी होने वाली पीढ़ी के लिए, वह नितांत अपठनीय हो जाएगी। इसी युक्ति से गुयाना में जहाँ 43 प्रतिशत लोग हिन्दी बोलते थे, को फ्रेंच द्वारा डि-क्रियोल कर दिया गया और अब वहाँ देवनागरी की जगह रोमन-लिपि को चला दिया गया है। यही काम त्रिनिदाद में इस षड्यंत्र के जरिए किया गया है। नतीजतन, वहाँ नागरी लिपि अपाठ्य हो जाने वाली है।

जबकि, विडंबना यह है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों के धूर्त दलालों के दिशा निर्देश में, संसार की इस दूसरी बड़ी बोले जाने वाली भाषा से उसकी लिपि छीन कर, उसे रोमन लिपि थमाने की दिशा में हिन्दी के ही सभी अखबार जुट गए हैं। वे हिन्दी का क्रियोलीकरण कर रहे हैं। उन्होंने यह स्पष्ट धारणा बना ली है कि वे अब हिन्दी के लिए हिन्दी का अखबार नहीं निकाल रहे हैं, बल्कि अंग्रेजी के अखबार की नर्सरी का काम कर रहे हैं। क्योंकि, देर-सबेर इसी को ही तो भारत की राष्ट्रभाषा बनाना है। प्राथमिक शिक्षा के लिए विश्व-बैंक द्वारा प्राप्त धन का यही तो आखरी सुफल है, क्योंकि आगे जाकर समूची आरंभिक शिक्षा के कायांतरण के कर्मकांड को पूरा किया जाना एक अघोषित शर्त है, जिसमें हिन्दी के कई अखबार मिल-जुलकर आहुतियाँ दे रहे हैं। वे स्वाहा-स्वाहा करते हुए हिन्दी की आहुति चढ़ा रहे हैं। उन्होंने अपने हिन्दी-समाचार पत्रों में, बच्चों के लिए निर्धारित पृष्ठों पर अंग्रेजी सिखाने का श्रीगणेष कर दिया है। यह एजुकेशन फॉर ऑल का उद्घोष, वस्तुत: 'इंगलिश फॉर ऑल' ही है। क्योंकि, आज इ.एल. टी. (इंग्लिश लर्निंग और टीचिंग) उद्योग की धनराशि रक्षा बजटों के आसपास पहुँचने की तैयारी में है।

वे आजादी मिलने के साथ ही गांधी-नेहरू की पीढ़ी द्वारा कर दी गई महाभूल को वे दुरुस्त करने में लगे हैं, जिसके चलते अंधराष्ट्रवादी उन्माद में हिन्दी को राष्ट्रभाषा की जगह बिठा दिया था- जबकि, यह तो सत्ता की भाषा बनने के लायक ही नहीं थी। यह तो अपढ़ गुलामों और मातहतों और अज्ञानियों की भाषा थी और उसे वैसा ही बने रहना चाहिए। इसी किस्म की इच्छा और संकल्प की अनुगूँज गुरुचरणदास एवं अमेरिका की बर्कली विश्वविद्यालय की प्रोफेसर गेल ओमवेत जैसे लोगों के प्रायोजित लेखों से सुनाई देती है, जो इन अखबारों के संपादकीय पृष्ठों पर छपते रहते हैं। वे बार-बार कहते हैं कि जल्द ही हिंदुस्तान, दुनिया की आने वाले दो सौ वर्षों के लिए 'भाषाशक्ति' बनने वाला है- जबकि वे जानते हैं कि इससे बड़ा धोखा और कोई हो ही नहीं सकता। वास्तव में वे भारत को 2000 बरस के लिए गुलाम बनाने के लिए ठेके का काम ले चुके हैं। वे उसे उस दिशा में घेरने की निविदा हाथिया चुके हैं। इस घेरने के काम में अखबार सबसे सुंदर और सुविधाजनक लाठी है।

पिछले दिनों, अमेरिका में गरीब मुल्कों की आँखें खोल देने वाली एक पुस्तक छप कर आई है, जिसे न लिखने के लिए सी.आई.ए. ने एक मिलियन डॉलर रिश्वत देने की पेश की थी - लेकिन, लेखक ने उनके इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया और साहस जुटा कर प्रायश्चित के रूप में लिख ही डाली यह पुस्तक : 'कन्फेशन ऑव एन इकोनॉमिक हिटमैन'। नोम चोमस्की और डेविड सी. कोर्टन जैसे बुद्धिजीवियों ने, लेखक को उत्साहित करते हुए कहा कि इसका प्रकाशन शेष संसार का तो हित करेगा ही, बल्कि, इससे अमेरिका का भी हित ही होगा। इसलिए इसका छपना जरूरी है।

बहरहाल, पुस्तक के लेखक जॉन पार्किन्स ने उसमें विस्तार से

दुनिया के गरीब मुल्कों के आर्थिक ढाँचे को तहस-नहस कर दिया कि नतीजतन वे सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर पर भी विपन्न हो गए। कहने की जरूरत नहीं कि ऐसे ही बहुराष्ट्रीय निगमों और विश्व-बैंक के पूर्व कर्मचारी हिन्दी के अखबारों के 'तथाकथित-संपादकीय पृष्ठों' पर कब्जा करते जा रहे हैं। वे इन दिनों हमारे हिन्दी के समाचार पत्रों द्वारा इस भूमंडलीय युग के चिंतक और राष्ट्र निर्माता बन गए हैं। भारत में अंग्रेजी के अश्वमेध में भिड़े ये लोग, अंग्रेजी की अपराजेयता का इतना बखान करते हैं कि सामान्यजन ही नहीं, कई राजनेताओं और शिक्षाविदों को लगता है, जैसे आर्थिक प्रलय की घड़ी सामने है और उसमें अब केवल अंग्रेजी ही मत्स्यावतार हैं। अत: हमें लगे हाथ उसकी पीठ पर इस आर्यभूमि को चढ़ा देना चाहिए, वर्ना यह रसातल में डूब जाएगी। ये सब देश को बचाने वाले लोग हैं। वे कहते हैं, एक ईस्ट इंडिया कंपनी ने तुम्हें सभ्य बनाया। अब जो आ रही हैं, वे तुम्हें संपन्न बनाएँगी। माँ तो माँगने पर ही रोटी देती है, ये तुम्हें बिना माँगे माल देंगी। तुम्हें मालामाल कर देंगी। फिर भी तुम 'माँगोगे मोर'। इसलिए हिन्दी को छोड़ो और अंग्रेजी का दामन थामो।

अंग्रेजी की विरुदावली गा-गाकर गला फाड़ते ये किराए के कोरस गायक, यह क्यों भूल जाते हैं कि चीनी (जिसमें ढाई हजार चिह्ननुमा अक्षर हैं) - और जापानी जैसी चित्रात्मक लिपियों वाली भाषाओं ने अंग्रेजी की वैसाखी के बगैर ही बीसवीं सदी के सारे ज्ञान-विज्ञान को अपनी उन्हीं चित्रात्मक लिपियों वाली भाषा में ही विकसित किया और आज जब संसार में व्यापार, तकनॉलाजी या आर्थिक क्षेत्रों के संदर्भ खुलते हैं तो कहा जाता है, लिंचपिन ऑव वर्ल्ड-इकोनॉमी एंड टेकनोलॉजी हेज शिफ्टेड फ्रॉम अमेरिका टू जापान। हालाँकि, कुछ लोग अब जापान के साथ चीन का भी नाम लेने लगे हैं और यह किसी से छुपा नहीं है कि अब अमेरिका चीन से भी चमकने लगा है। क्योंकि वह शीघ्र ही सूचना प्रौद्योगिकी पर कब्जा करने वाला है। क्योंकि, अमेरिका में पढ़ रहा एक चीनी छात्र, यदि वहाँ रहकर कोई कंप्यूटर सॉफ्टवेअर विकसित करता है तो साथ ही साथ उसे वह अपनी चीनी भाषा में विकसित करता है और अपने देश में पहुँचते ही वह उसे स्थापित कर देता है। जबकि, हिन्दी की नागरी लिपि, जो संसार भर की तमाम भाषाओं की लिपियों में श्रेष्ठ और वैज्ञानिक है, को अंग्रेजी का रास्ता साफ करने के लिए निर्दयता के साथ मारा जा रहा है। वे अपने धूर्त मुहावरे में बताते हैं कि अखबार इस तरह हिन्दी को नष्ट नहीं कर रहे हैं, बल्कि ग्लोबल बना रहे हैं। वे हिन्दी को एक फ्रेश-लिंग्विस्टिक लाइफ दे रहे हैं। हम जानना चाहते हैं कि भैया आप किसे मूर्ख बना रहे हैं - जिस हिन्दी को राष्ट्र संघ की भाषा सूची में शामिल नहीं करवा सके, उसे 'हिंग्लिश' बनाकर ग्लोबल बनाएँगे? और 'हिंग्लिश' बन कर, हिन्दी ग्लोबल होगी कि वह अंग्रेजी के 'महामत्स्य' के पेट में पहुँच जाएगी? यह भाषा के विकास के नाम पर खेला जाने वाला शताब्दी का सबसे बड़ा छल है।

दरअस्ल, श्रीमान जी, आप आग लगा कर, उस पर आग के आगे पर्दा खींच रहे हैं और हमें समझा रहे हैं कि 'बेवकूफो! हिन्दी सकुशल है और वह जिंदा बची रहेगी।' अंग्रेजी की लपट में स्वाहा नहीं होगी। यदि हो भी गई तो उसके बाद वह राख के रूप में रहेगी, पर रहेगी जरूर। भाषा की भस्म को कपाल पर पोत कर तुम प्रसन्न रहना। ठीक है, हिन्दी तुम्हारी जबान पर रहे न रहे पर वह तुम्हारे ललाट पर तो रहेगी ही। पहले हिन्दी 'ललाट की बिंदी' भर थी, अब तो तुम उससे पूरा ललाट लीप लेना। फिर तुम तो आत्मावादी हो। वासांसि जीर्णानि यथा विहाय वाले हो, इसलिए भलीभाँति जानते हो कि आत्मा अमर होती है। हिन्दी की आत्मा अमर है और रहेगी। वो सिर्फ पुराने कपड़े बदल रही है। उसके पुराने कपड़ों की हालत नौ गज साड़ी फिर भी जाँघ उघाड़ी वाली उक्ति की तरह हो चुकी थी (शब्द का बहुत बड़ा जखीरा अर्थात मोटे-मोटे शब्दकोश, लेकिन फिर भी लफ्जों के लाले।) हिंदुस्तान की एक बुकराई हुई अंग्रेजी लेखिका ने कहा - बताइए हिन्दी के पास 'एटम' के लिए कोई शब्द ही नहीं है फिर भला उसमें विज्ञान की शिक्षा कैसे संभव है? बहरहाल तुम्हारी हिन्दी जींस पहन रही है। उसे स्मार्टनेस की तरफ जाना है। वह फिलहाल ग्रीन रूम में है। लद्धड़ता छोड़कर एक फ्रेश-लिंग्विटक लाइफ को हासिल करने की तरफ बढ़ रही है।

डेविड. सी. कार्टन ने वैश्वीकरण की हकीकत उजागर करते हुए ठीक ही कहा है कि ग्लोबलाइजेशन का अर्थ सरकारों और बहुराष्ट्रीय निगमों का पारस्परिक संबंध भर है। वह कहता है कि इसीलिए ग्लोबलाइजेशन की प्राथमिक कार्रवाई यही होती है कि जिस किसी चीज से भी 'राष्ट्रीयता' की बू आए, उसे अविलंब हटाइए। इस 'सैद्धांतिकी' के मुताबिक निश्चय ही 'हिन्दी' ग्लोबलाइजेशन के पहले निशाने पर है, चूँकि इससे राष्ट्रीयता की बहुत तीखी और बरदाश्त बाहर गंध आती है। वजह यह कि हिन्दी का रिश्ता राष्ट्रभाषा के रूप में नाथ देने से यह भारत के कुछ प्रदेशों की जनता की नजर में राष्ट्रीय-अस्मिता का पर्याय बन गई है। नतीजतन, इस पर चढ़े राष्ट्रीयता के इस कवच को हटाना जरूरी है, वर्ना यह मारे जाने में काफी समय लेगी। बहुत मुमकिन है कि लोग इसकी हत्या के प्रकट पैंतरों को देख कर हो-हल्ला करते हुए एकमत होने लगें। लेकिन भूमंडलीकरण की सफलता तभी है जब लोग भाषा और भूगोल को लेकर एकमत होना छोड़ दें। राष्ट्र राज्य की बात करने वाले को, लगे हाथ मूर्ख बताने के लिए अविलंब आगे आएँ।

इसी संभावित संकट को भाँप कर दलाल लोग यह कहते फिरते हैं कि हिन्दी को राजभाषा या राष्ट्रभाषा के पाखंड से मुक्त करके 'जनता की गाढ़ी कमाई से खींचे गए' पैसों का बहाया जाना अविलंब रोका जाए। क्योंकि इससे उसे अकारण ही ऑक्सीजन मिलती रहती है। जबकि उसकी ब्रेन-डेथ हो चुकी है। उसमें सोचने समझने की क्षमता ही नहीं है। राजभाषा के नाम पर धन उड़ेलने से एक और समस्या पैदा हो जाती है, वह यह कि एक ओर, भाषा के जिस पुराने रूप को अखबार नष्ट करने में मेहनत करते हैं, दूसरी

ओर राजभाषा के नाम पर धन उड़ेलने से, भाषा का वह पुराना रूप, एक मानक के रूप में जिंदा बना रहता है।

अंग्रेजी इस बात में तो आरंभ से सतर्क रही और उसने हिन्दी का अन्य भारतीय भाषाओं से सहोदरा संबंध बनाने ही नहीं दिया, उलटे वैमनस्य और अदम्य वैरभाव को बढ़ाए रखा - लेकिन, हिन्दी की, अपनी बोलियों से जड़ें इतनी गहरी बनी और रही आईं कि उसको वहाँ से उखाड़ना मुश्किल रहा। बहरहाल, ये काम अब मीडिया ने अपने हाथ में ले लिया है। बोलियों का संहार करने में, जो काम इलेक्ट्रॉनिक-मीडिया कर रहा है, उसे दस कदम आगे जाकर हिन्दी के अखबार कर रहे हैं। जो अखबार साढ़े तीन रुपये में बिकते हुए जानलेवा आर्थिक कठिनाई का रोना रो रहे थे, वे अब एक या डेढ़ रुपये में चौबीस पृष्ठों के साथ अपनी चिकनाई और रंगीनी बेच रहे हैं। स्पष्ट है, यह विदेशी चंचला धनलक्ष्मी है। क्या ये लोग नहीं जानते कि यह पूँजी 'अस्मिताओं' का 'विनिमय' नहीं, बल्कि अस्मिताओं का सीधा-सीधा -'अपहरण' करती हैं। यह अखबारों को अपनी 'हवाई सेना' बनाकर, 'विचारों का विस्फोट' करती है, और विस्फोट वाली जगह पर थल-सेना कब्जा कर लेती है। इसी के चलते अखबार 'बाजारवाद' के लिए जगह बनाने का काम कर रहे हैं। वे पहले 'विचार' परोसते थे, अब 'वस्तु' परोस रहे हैं- अलबत्ता, खुद 'वस्तु' बन गए हैं। इसी के चलते अखबारों में संपादक नहीं, ब्रांड-मैनेजर बरामद होते हैं। अखबारों की इस नई प्रथा ने, 'मच्छरदानी' की 'सैद्धांतिकी' का वरण कर लिया है। कहने को वह 'मच्छर-दानी' होती है परंतु उसमें मच्छर नहीं होता। वह बाहर ही बाहर रहता है। ठीक इसी तरह अखबार में अखबारनवीस को छोड़कर, सारे विभागों के भीतर सब वाजिब लोग होते हैं। बस संपादकीय विभाग में संपादक नहीं होता। इसीलिए, आपस में पत्रकार बिरादरी एडिटोरियल को एडव्हरटोरियल विभाग कहती है। अब इस मार्केट-ड्राइवन पत्रकारिता में संपादकीय-विभाग, विज्ञापन-विभाग का मातहत है। यहाँ तक कि प्रकाशन योग्य सामग्री भी वही तय करता है। यों भी संपादकीय पृष्ठ दैनिक अखबारों में अब बुद्धिजीवियों के वैचारिक अभिव्यक्ति के लिए नहीं, राजनीतिक दलों के 'व्यू-पाइंट' (?) के लिए आरक्षित होते जा रहे हैं। वे राजनीतिक जनसंपर्क हेतु सुरक्षित पृष्ठ हैं। यह उसी पूँजी के प्रताप का प्रपात है, जो बाहर से आ रही है।

ऐसे में निश्चय ही वे हड़का कर पूछना चाहें कि बताइए भला यह कैसे हो सकता है कि आप पूँजी तो हमारी लें और 'भाषा और संस्कृति' आप अपनी विकसित करें? यह नहीं हो सकता। हमें अपने साम्राज्य की सहूलियत के लिए 'एकरूपता' चाहिए। सब एक-सा खाएँ। एक-सा पीएँ। एक-सा बोलें। एक-सा लिखें-लिखाएँ। एक-सा सोचें। एक-सा देखें। एक-सा दिखाएँ। तुम अच्छी तरह से जान लो कि यही संसार के एक ध्रुवीय होने का अटल सत्य है। हमारे पास महामिक्सर है - हम सबको फेंट कर 'एकरूप' कर देंगे। बहरहाल, उन्होंने भारत के प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया को अपना महामिक्सर बना लिया। इसलिए, अब अखबार और अखबार के बीच की पहले वाली यह स्पर्धा जो धीरे-धीरे गला काट हो रही थी अब क्षीण हो गई है। चूँकि अब वे सब एक ही अभियान में शामिल, सहयात्री हैं। उनका अभीष्ट भी एक है और वह है, 'वैश्वीकरण' के लिए बनाए जा रहे मार्ग का प्रशस्तीकरण। सो आपस में बैर कैसा? हम तो आपस में कमर्शियल-कजिन्स हैं। आओ, हम सब मिलकर मारें हिन्दी को। अब भारत की असली हिन्दी पत्रकारिता हिन्दी की ऐसी ही आरती उतार रही है।

यहाँ यह याद दिलाना जरूरी है कि आज जिस हिन्दी को हम देख रहे हैं - उसे 'पत्रकारिता' ने ही विकसित किया था। क्योंकि, तब की उस पत्रकारिता के खून में राष्ट्र का नमक और लौहतत्व था जो बोलता था। अब तो खून में लौह तत्व की तरह एफडीआई (फॉरेन डायरेक्ट इन्वेस्टमेंट) बहने लगा है। अत: वही तो बोलेगा। उसी लौहतत्व की धार होगी जो हिन्दी की गर्दन उतारने के काम में आएगी। हालाँकि, अखबार जनता में मुगालता पैदा करने के लिए वे कहते हैं, पूँजी उनकी जरूर है, लेकिन चिंतन की धार हमारी है। अर्थात सारा लोहा उनका, हमारी होगी धार। अर्थात भैया हमें भी पता है कि धार को निराधार बनाने में वक्त नहीं लगेगा। तुम्हीं बताओ, उन टायगर इकनॉमियों का क्या हुआ, जिनसे डरकर लोग कहने लगे थे कि पिछली सदी यूरोप या पश्चिम की रही होगी, यह सदी तो इन टायगरों की होगी। कहाँ गए वे टायगर? उनके तो तीखे दाँत और मजबूत पंजे थे। नई नस्ल के ये कार्पोरेटी चिंतक रोज-रोज बताते हैं - हिंदुस्तान विल बी टायगर ऑफ टुमॉरो।

भैया ये जुमले सुनते-सुनते हमारे कान पक गए। हमें टुमॉरो का कुछ नहीं बनना, बल्कि जो कुछ बनना है आज का बनना है। हम कल के टायगर होने के बजाय आज की गाय होने और बने रहने में संतुष्ट हो लेंगे। गाय घास खाएगी तथा दूध और गोबर देगी और उससे हमारी खेतियों की सेहत ठीकठाक बनी रहेगी। हमारे किसान आत्महत्या करने से बच जाएँगे। लेकिन तुम हो कि थोड़े से चमड़े के लिए पूरी की पूरी जिंदा गाय को मार रहे हो।

तब की पत्रकारिता में अपने देश और समाज को गढ़ने-रचने का साहस था, संकल्प था, समझ और स्वप्न भी था (बेशक उसमें राष्ट्रीय-पूँजीवाद की एक बड़ी व ऐतिहासिक भूमिका भी थी।)। वह जख्मी कलम के साथ बारूद और बंदूक की बर्बरता के खिलाफ लड़ी थी। इस कारण वह भाषा के मसले को गहरे ऐतिहासिक विवेक के साथ देख रही थी। यहाँ गांधी का प्रसंग उल्लेखनीय लगता है। वे भी पत्रकार थे। आजादी की घोषणा के बाद जब बी.बी.सी. ने उन्हें बुलाया तो उन्होंने प्रस्ताव को ठुकराते हुए कहा था, 'संसार को कह दो गांधी को अंग्रेजी नहीं आती। गांधी अंग्रेजी भूल गया है।' यह एक नवस्वतंत्र राष्ट्र के निर्माण के बड़े स्वप्न का उत्तर था। यह वाक्य नहीं, एक भावी महासमर के प्रारूप का खुलासा था। उन्हें यह

अहसास था कि अपनी भाषा के अभाव में, राष्ट्र फिर से गुलामी के नीचे चला जाएगा। उन्होंने स्वयं को वर्गच्युत करके, जिस तरह भारतीय समाज के आखिरी आदमी के बीच खुद को नाथ लिया था, उसने उन्हें इस बात के लिए और अधिक दृढ़ कर लिया था कि अंग्रेजी की औपनिवेशिक दासता से मुक्त नहीं हुए तो इतनी लंबी लड़ाई के बाद हासिल की गई आजादी का कोई अर्थ नहीं रह जाएगा। उन्होंने ये बात कई-कई जगह और अपनी चिट्ठियों तथा पर्चों में भी बार-बार लिखी और छापी।

मगर, आज सबसे बड़ी त्रासदी तथा विसंगति यही है कि हमारी पत्रकारिता, नई तथा कभी खत्म न हो सकने वाली गुलामी खोलने का रास्ता सिर्फ अपनी धंधई बुद्धि की व्यावसायिक अधीरता के कारण कर रही है। इस पत्रकारिता में, अखबार जो 'माल' की तरह उत्पादित और वितरित हो रहा है। कहीं कहीं तो छापकर प्रेस से सीधे गोदामों में भरा जा रहा है। क्योंकि उन्हें अब सर्कुलेशन नहीं केवल प्रिंट आर्डर को देखना है। क्योंकि, वह विज्ञापनों की दर तय करता है। उसमें न तो अतीत के आकलन का गहरा विवेक रहा है - और, न ही 'भविष्य में झाँक सकने वाली दृष्टि'। एक किस्म का धंधई-उन्माद है, जिसे पूँजी का प्रवाह पैदा कर रहा है। इसलिए, वह केवल अपने व्यावसायिक साम्राज्य के लिए अराजक होने की हद तक, भाषा, संस्कृति और समाज को विखंडित करने से भी संकोच नहीं कर रहे हैं। यों भी उनके लिए अब समाज को मात्र एक उपभोक्तावर्ग की तरह देखने की लत पड़ गई है। अब उनके लिए देश की जनता राष्ट्र की नागरिक नहीं बल्कि उसके प्रॉडक्ट (?) की ग्राहक है। इसके साथ विडंबना यह भी है कि संपूर्ण हिन्दी भाषाभाषी समाज भी, भाषा के साथ किए जा रहे ऐसे विराट छल को पांडुपुत्रों की मुद्रा में गूँगा बन कर देख रहा है।

यहाँ यह पुनर्स्मरण कराना जरूरी है कि हिन्दी का 'समकालीन-भाषा-रूप' आज विकास की जिस सीढ़ी तक पहुँचा है, उसे गढ़ने और विकसित करने में निःसंदेह हमारी हिन्दी पत्रकारिता की भूमिका बहुत बड़ी रही है, लेकिन दुर्भाग्यवश वही पत्रकारिता, जिसे भाषा अभी तक का अपना सबसे अधिक विश्वसनीय माध्यम मानते आ रही थी, आज सबसे बड़ा धोखा उसी से खा रही है। उसके लिए सर्वाधिक संदिग्ध वही बन गया है। आज दैनिक-पत्रकारिता, उस मादा-श्वान की तरह है, जो अपने ही जन्मे को भी खा जाती है।

अब यह भ्रम हमें दूर कर लेना चाहिए कि भाषा बोले जाने वाले लोगों की संख्या से बड़ी है। यह मूर्ख मुगालता है। बोला जाना 'कामचलाऊ संप्रेषण' का संवादात्मक रूप है, चिंतनात्मक नहीं। वह हमेशा ही 'आज' 'अभी' 'ताबड़तोड़' बनाम अनियंत्रित अधीरता से भरा होता है। नतीजतन, उसे इस बात की कोई जरूरत और फुरसत नहीं होती कि वह अंग्रेजी के किसी नए शब्द का पर्याय ढूँढ़े या उसके लिए नया शब्द गढ़े। जैसे कि पिछली पीढ़ी ने मेंबर ऑफ पार्लियामेंट के लिए पहले संसद सदस्य शब्द गढ़ा फिर अंत में सांसद शब्द बनाया। लेकिन इलेक्ट्रॉनिक मीडिया अंग्रेजी को जस का तस उठाकर अपनी फौरी जरूरत पूरी कर लेता है। इसी आदत ने हिन्दी में, शेयर्ड वकैब्युलरि को बढ़ाया और अखबारों ने लगे हाथ, उसे एक अभियान की तरह उठा लिया। इसलिए, भाषा के इस खिचड़ी रूप का जयघोष करते हुए, जो लोग भाषा की सुंदर सेहत का प्रचार कर रहे हैं, या तो वे इस खतरनाक मुहिम का बेशर्म हिस्सा हैं, या फिर उनकी समझ का कांकड़ ही छोटा है। मेरे खयाल से पहली बात ज्यादा सच्ची और सही है।

इसके साथ ही ऐसे महामूर्खों या फिर चालाकों की कमी नहीं है जो हर समय इस बात की डूँडी पीटते रहते हैं कि लो अब तो तुम्हारी हिंग्लिश ब्रिटेन में भी लोकप्रिय हो गई है। यह बात ऐसे महातथ्य की तरह प्रचारित की जा रही है जैसे हमारी हिन्दी ने अंग्रेजी की सदियों की कुलीनता की कलाई झटक कर उसे सिंहासन से उतारकर सड़क पर ला दिया है। आभिजात्य का प्रोलेतेरीकरण कर दिया है। रॉयल को रौंद दिया है। देखो! गौरांग प्रभु ने कुलीनता के कवच को खदेड़कर तुम्हारी हिंग्लिश का झगला धारण कर लिया है। यह हिन्दी की उपलब्धि नहीं, सिर्फ भारतीयों की गुलाम मानसिकता की सूचना है। यह दासी का क्वीन के करीब पहुँच जाने का मूर्ख और मिथ्या रोमांच है, जो हिन्दी के हिंग्लिशियते अखबारों की प्रथम पृष्ठों की खबर बनाता है।

पिछले ही दिनों ऐसी ही पगला डालने वाली एक खबर और रही कि हिन्दी के कुछेक शब्दों को ऑक्सफर्ड डिक्शनरी ने ले लिया। ऑक्सफर्ड डिक्शनरी हिन्दी-गर्भित हो गई है। ये वे शब्द थे, जिनके लिए अंग्रेजी में उपयुक्त या पर्याय असंभव था क्योंकि वे अपना विकल्प खुद थे - मसल, घी, गुड़, मंत्र, सत्याग्रह, पंडित आदि-आदि। उनको अंग्रेजी में उलथाया जाता तो वे अपना अर्थ ही खो देते। बस... क्या था? अखबार बताने लगे कि ये लो हिन्दी छाने लगी अंग्रेजी पर। एक अपढ़ महान ने तो यह तक कह दिया कि आज हमने डिक्शनरी पर विजय पाई है, एक दिन ब्रिटेन पर पा लेंगे। बहरहाल, यह वैसी ही विदूषकीय प्रसन्नता थी जो मालवी की एक कहावत को चरितार्थ करती है कि एक नदीदे को किसी ने दे दी कटोरी तो उसने उससे पानी पी-पीकर ही अपना पेट फोड़ लिया। जबकि, यह ऑक्सफर्ड-डिक्शनरी की ज्ञानात्मक उदारता नहीं बल्कि नव उपनिवेशवादी बिरादरी का पूरा सुनिश्चित अर्थशास्त्र और मनोविज्ञान है, जो भारतीयों को तैयार करता है कि जब अंग्रेजी जैसी महाभाषा उदार होकर हिन्दी के शब्दों को अपना रही है तो हिन्दी को भी चाहिए कि वह अंग्रेजी के शब्दों को इसी उदारता से अपनाए। अंग्रेजी के शब्दकोष में हिन्दी के शब्दों का दाखिला बमुश्किल एक प्रतिशत होगा। अर्थात दाल में नमक के बराबर भी नहीं। लेकिन, हमारे अखबार तो नमक में दाल मिला रहे हैं। हिन्दी की विशाल हत्या को समावेशी बनाने और बताने का कैसा उदाहरण है।

जब भी अंग्रेजी द्वारा हिन्दी को हिंग्लिश बनाए जाने की चिंता

चालाक लोग अपनी धूर्तता में एक कविताई सच के जरिए हमें समझाने के लिए आगे आ जाते हैं कि कुछ है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी। जबकि, हकीकत ये है कि हमारी हस्ती कभी की पस्ती में बदल चुकी है। हमारी भाषा हमारी संस्कृति कभी के घुटने टेक चुकी है। हमारा पूरा व्यक्तित्व (परसोना) पिछले दशकों में पश्चिमी हो चुका है, जो अब अमेरिकाना होने की तरफ बढ़ रहा है। किसी ने कहा था - आज लोग अमेरिका जाकर अमेरिकाना बन रहे हैं, लेकिन शीघ्र ही वह समय आएगा जबकि आपके घर में घुसकर आपको अमेरिकन बना दिया जाएगा। यह मिथ्या कथन-सी लगने वाली बात धीरे-धीरे सत्य का रूप धारण कर रही है। इसलिए अब मॉडर्निज्म एक पुराना और बासी शब्द है, जिसे छिलके की तरह उतारकर उसकी जगह नया 'अमेरिकाना' शब्द जगह ले चुका है। यहाँ तक कि विज्ञापनों में अब अमेरिकी मॉडलों का उपयोग इस तरह किया जाता है, गालिबन भारतवंशियों! ये तुम्हारे नए देव-पुरुष हैं और तुम्हें इन्हीं के सम्मुख दंडवत होना है। पूरा मीडिया गोरी चमड़ी, गोरी भाषा का जिस बेषर्मी से आदर्शीकरण कर रहा है, वह देखने लायक है।

दरअसल, 'अस्मिता' की इन दिनों एक नई और माध्यम निर्मित अवधारणा को प्रस्तुत करते हुए उसका प्रचार और वकालत की जा रही है। यूँ भी अब वही सबको परिभाषित करता है और तमाम जीवन और समाज के तमाम मूल्यों का प्रतिमानीकरण करने का औजार बन चुका है। दूसरी तरफ हम अपनी सनातन रूढ़-सांस्कृतिक आत्मछवि से इतने मोहासक्त हैं कि प्रत्यक्ष और प्रकट पराजय को स्वीकारना नहीं चाहते हैं। बर्बर उपनिवेश के विरुद्ध लड़ने की निरंतरता को जीवित बनाए रखने के लिए ऐसी अपराजय का अस्वीकार पराधीनता के दौर में, राष्ट्रवाद की नब्जों में प्राण फूँकने के काम आता था। कुछ है कि हस्ती मिटती ही नहीं - तब, यह दंभोक्ति अचूक और अमोघ बनकर काम करती थी। जन-जन को जोड़ने और जगाने का जुमला था ये कि लगे रहो भैया। निश्चय ही उस दंभोक्ति ने ब्रिटिश उपनिवेश के विरुद्ध संघर्ष में समूचे राष्ट्र को लगाए रक्खा और हमने अंग्रेजों को हकालकर बाहर कर दिया। लेकिन वह अपने दंश का जहर खून में इस कदर शामिल कर चुका था कि हम आज हिन्दी को हिन्दी से हिंग्लिश बनाते देख रहे हैं कि कहते हैं कि कुछ नहीं होगा, वह हर हाल में बची रहेगी। हस्ती है कि मिटती नहीं कहते हुए हम यह लांछन अपने माथे पर लेने के लिए तैयार हैं कि हमने अपनी भाषा को अपने सामने दम तोड़ते हुए देखा और कुछ नहीं किया।

कहने की जरूरत नहीं कि युद्धातुर उतावली से गुरुचरण दास जैसे लोग अपने तर्कों में बार-बार डेविड क्रिस्टल की पुस्तक लेंग्विज डेथ का हवाला इस तरह देते हैं, जैसे वह भाषा की भृगु-संहिता है, जिसमें भाषा की मृत्यु की स्पष्ट भविष्योक्ति है- अत: आप हिन्दी की मृत्यु को लेकर छाती-माथा मत कूटो। जबकि इससे ठीक उलट बुनियादी रूप से वह पुस्तक भाषाओं के धीरे-धीरे क्षयग्रस्त होने को लेकर गहरी चिंता प्रकट करती है। भाषाई उपनिवेशवाद (लिंग्विस्टिक इंपीयरिलिज्म) के खिलाफ सारी दुनिया के भाषाशास्त्रियों को सचेत करती है पर हिन्दी वाले हैं कि सुन्न पड़े हैं। हिन्दी साहित्य संसार में विचरण करने वाले साहित्यकार तो तेरी कविता से मेरी कविता ज्यादा लाल में लगे हुए हैं या हिन्दी की वर्तनी को दुरुस्त कर रहे हैं। जबकि इस समय सबको मिल-जुलकर इस सुनियोजित कूटनीति के खिलाफ कारगर कदम उठाने की तैयारी करनी चाहिए।

बहरहाल, इस सारे मसले पर एक व्यापक राष्ट्रीय-विमर्श की जरूरत है। हमें याद रखना चाहिए कि कई नव स्वतंत्र राष्ट्रों ने अपनी भाषा को अपनी शिक्षा और आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की भाषा बनाया। इसलिए, आज उनके पास उनका सब कुछ सुरक्षित है। हमने अपनी राजनीतिक भीरुता के चलते भाषा के मसले पर पुरुषार्थ नहीं दिखाया। इसी की वजह है कि हमसे आज का ये धोखादेह समय हमारे सर्वस्व को जिबह के लिए माँग रहा है। आज हमारी आजादी वयस्क होते ही राजनीति के ऐसे छिनाले में फँस गई है कि सारा देश मीडिया में चल रहे व्यवस्था का मुजरा देख रहा है। पूरा समाज मीडिया और माफिया आपरेटेड बन गया है। अब मीडिया ही आरोप तय करता है, वही मुकदमा चलाता है और अंत में अपनी तरह से अपनी तरह का फैसला भी सुनाता रहता है और विडंबना यह कि वह यह सब जनतंत्र की दुहाई देकर करता है, जबकि अपनी आलोचना का हक वह किसी को नहीं देता और अपने आत्मावलोचन के लिए तो उसके पास समय ही नहीं है। ऐसी बातें सुनने की घड़ी में वह अपने कान से हियरिंग-एड निकाल लेता है।

राजनीति ने तो भाषा, शिक्षा, संस्कृति जैसे प्रश्नों पर विचार करना बहुत पहले ही स्थगित कर रखा है। भारत में राजनीति एक नया, पूँजी निवेश का क्षेत्र है। इसलिए, वह तो देश को बाजार तथा एन.जी.ओ. के भरोसे छोड़कर मुक्त हो गई है। यों भी उसमें प्रविष्टि की अर्हता, हत्या और घूस लेकर कानून के शिकंजे से सुरक्षित बाहर आ जाना हो गया है- और जो इन अर्हताओं से रहित हैं, वे देश को एक प्रबंध-संस्थान की तरह चलाने को भूमंडलीकरण की वैश्विक दृष्टि मानते हैं और वे उसके राजनीतिक प्रबंधक का काम कर रहे हैं। यह राजनीतिक संस्कृति की समाज से विदाई की घड़ी है, जिसने संस्थागत अपंगता को असाध्य बन जाने की तरफ हाँक दिया है। हम क्या थे? हम क्या हैं और क्या होंगे अभी? जैसे प्रश्नों पर बहस करना मूर्खों का चिंतन हो गया है। जबकि, ये प्रश्न शाश्वत रहे हैं और हमेशा ही उत्तरों की माँग करते रहेंगे। इसलिए, हमें अपने इतिहास को जीवित बचाकर रखना जरूरी है, क्योंकि भविष्य का जब सौदा होगा, उसमें हमारी कम, हमारे अतीत की भूमिका बहुत बड़ी होती है। वरना, वह भाषा की मृत्यु के साथ दफ्न हो जाएगा। वे हमें हालीवुड की तरह भविष्यवादी फंतासियों में जीने के लिए तैयार किए दे रहे हैं।

कुछ दिनों पूर्व विश्व हिन्दी सम्मेलन हुआ, उसमें तालियाँ कूटने के बजाय इस प्रश्न पर बहुत शिद्दत से सोचा जाना चाहिए था कि क्या हम शेष संसार के मुल्क बोस्निया, जावा, चीन, आस्ट्रिया, बल्गारिया, डेनमार्क, पुर्तगाल, जर्मनी, ग्रीक, इटली, नार्वे, स्पेन, बेल्जियम, क्रोएशिया, फिनलैंड, फ्रांस, हंग्री, नीदरलैंड, पोलैंड या स्वीडन की तरह अपनी ही मूल-भाषा में शिक्षा और ज्ञान के क्षेत्र के लिए जगह बनाने के लिए क्या कर सकते हैं? क्योंकि, बकौल सेम पित्रौदा, सिर्फ एक प्रतिशत ही हैं, जो लोग अंग्रेजी जानते हैं। या कि हमें अफ्रीकी उपमहाद्वीप बन जाने की तैयारी करना है। प्रसंगवश यहाँ एक भाषिक उपनिवेश के सिद्धांतकार का पूर्वाक्त कथन याद आ रहा है- वे कहते हैं अभी तक हमारा ध्यान अफ्रीका पर केंद्रित था, अब हम एशिया पर एकाग्र कर रहे हैं। अंत में, अफ्रीका महाद्वीप में स्वाहिली लेखक की पीड़ा को भारतीय उपमहाद्वीप की पीड़ा का पर्याय बनाना है। उसने कहा कि जब ये नहीं आए थे तो हमारे पास हमारी कृषि, हमारा खानपान, हमारी वेशभूषा, हमारा संगीत और हमारी अपनी कहे जाने वाली संस्कृति थी- इन्होंने हमें अंग्रेजी दी और हमारे पास हमारा अपने कहे जाने जैसा कुछ नहीं बचा है। हम एक त्रासद आत्महीनता के बीच जी रहे हैं।

हमारी हिन्दी पत्रकारिता को सोचना चाहिए कि विदेशी धन के बलबूते पर खुद को मीडिया-मुगल बनाने के बजाय वह सोचें कि अंततः भारतीय भाषाओं को आमतौर पर और हिन्दी को खासतौर पर हटाकर, वह देश को आत्महीनता के जिस मोड़ की तरफ घेरने जा रही है। वह, उस कल्चरल इकोनॉमी की सुनियोजित युक्ति है, जो एक नव-उपनिवेशवाद से जन्मी हैं। इसके साथ यह भी सोचें कि कहीं ऐसा न हो कि वे केवल प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की आरती उतारने वाले भर रह जाएँ और देवपुरुष कोई अन्य हो जाए। बाहर की लक्ष्मी आएगी तो वह विष्णु भी अपना ही लाएगी। आपके क्षीरसागर के विष्णु सोए ही रह जाएँगे।

क्या हमारी भारतीय भाषाओं के साथ, हिन्दी के ये हिंग्लिशियाते अखबार इस पर कभी सोचते है कि पाओलो फ्रेरे से लेकर पॉल गुडमेन तक सभी ने प्राथमिक शिक्षा के सर्वश्रेष्ठ माध्यम को मातृभाषा ही माना है और हम हिन्दुस्तानी है कि हमारे रक्त में रची बसी भाषा को उसके मांस-मज्जा सहित उखाड़कर फेंकने का संकल्प कर चुके हैं। दरअसल, औपनिवेशक दासत्व से ठूँस-ठूँसकर भरे हमारे दिमागों ने हिन्दी के बल पर पेट भर सकने की स्थिति को कभी बनने ही नहीं दिया, उल्टे धीरे-धीरे शिक्षा में निजीकरण के नाम पर शहरों में गली-गली केवल अंग्रेजी सिखाने की दुकानें खोलने के लिए लायसेंस उदारता के साथ बाँटे गए। उन्हें इस बात का कतई इल्हाम नहीं रहा कि वे समाज और राष्ट्र के भविष्य के साथ कैसा और कौन सा सलूक करने की तैयारी करने जा रहे हैं। पूँजीवादी भूमंडलीकरण से देश स्वर्ग बन जाएगा, ऐसी अवधारणाएँ रखने वाले अधकचरे ग्लोबलिस्टों की हिन्दी में इतनी भरमार है कि वे एक अरब लोगों के भविष्य का मानचित्र मनमाने ढंग से बनाना चाहते हैं- और दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि पूरा देश गूँगों की नहीं अंधों की शैली में आँख मीचकर गुड़ का स्वाद लेने में लगा हुआ है, उनकी व्याख्याओं में भाषा की चिंता एक तरह का देसीवाद है जो भूमंडलीकरण के सांस्कृतिक अनुकूलन को हजम नहीं कर पा रहा है। वे इसे मरणासन्न देसीवाद का छाती-माथा कूटना कहकर उससे अलग होने के लिए उकसाने का काम करते हैं। ताकि, अंग्रेजी के विरुद्ध कहीं कोई भाषा-आंदोलन खड़ा न हो जाए।

भारत में सूचना प्रौद्योगिकी के अवतार-पुरुष होने का जो डंका पीटा जाता है, उसके बारे में एक अमेरिकी विशेषज्ञ ने एक वाक्य की टिप्पणी में हमारी औकात का आकलन करते हुए कहा कि भारत के आई.टी. आर्टिजंस तो आभूषणों की दुकानों के बाहर गहनों को पालिश करके चमकाने वाले लोग भर हैं। माइक्रोसॉफ्ट उत्पाद बनाता है और भारतीय उसे केवल अपडेट करते हैं। यह वाक्य हमारे सूचना-सम्राट होने के गुब्बारे की क्षणभर में हवा निकाल देता है और दुर्भाग्यपूर्ण और शर्मनाक बात यह है कि हम इसी के लिए (आई.टी. आर्टिजंस) के लिए अपनी भाषाओं को मार रहे हैं। हम चमड़े के लिए जिंदा गाय मारने पर आमादा है।

यदि हमें हिन्दी को आमतौर पर और तमाम अन्य भारतीय भाषाओं को खासतौर पर बचाना है, तो पहले हमको प्राथमिक-शिक्षा पर एकाग्र करना होगा और विराट-छद्म को नेस्तानबूत करना होगा, जो बार-बार ये बता रहा है कि अगर प्राथमिक शिक्षा में पहली कक्षा से ही अंग्रेजी अनिवार्य कर दी जाए, तो देश फिर से सोने की चिड़िया बन जाएगा। जहाँ तक भाषा में महारत का प्रश्न है, संसार भर में हिन्दुतान के ढेरों प्रतिभाशाली वैज्ञानिक उद्योगपति और रचना लेखक रहे हैं, जिन्होंने अपनी आरंभिक शिक्षा अंग्रेजी में पूरी नहीं की। इसके साथ सबसे महत्वपूर्ण और अविलंब ध्यान देने वाली बात यह है कि प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में निरंतर बढ़कर विकराल होते निजीकरण पर भी सफल नियंत्रण पाना होगा। तभी हम अपना जैसा कहे जा सकने वाला थोड़ा बहुत सुरक्षित रख पाने की स्थिति में होंगे। भारतीय भाषाओं को रोमन लिपि में बदलने का परिणाम यह होगा कि आने वाले पच्चीस वर्ष बाद हमारी हजारों सालों की भारतीय भाषाएँ, बच्चों के लिए केवल जादुई लिपियाँ होंगी। इसलिए, अगर हमें अपनी भाषाओं को बचाना है तो ऐसे सुनियोजित षड्यंत्र के खिलाफ, हर उस आदमी को उन अखबारों को व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से पत्र लिखे जाने का निरंतर अभियान चलाया जाना चाहिए और उन्हें कहना चाहिए कि वे भाषा के खिलाफ किए जा रहे इस विराट छल को अविलंब स्थगित करें अन्यथा वे उसे पढ़ना बंद कर देंगे। भाषा भी राष्ट्र की धरोहर है और उन्हें नष्ट करने की कोशिशें राष्ट्रद्रोह से कोई छोटा अपराध नहीं है। मुझे लगता है, यही आखिर वक्त है, जब उत्सवधर्मी मानसिकता के खिलाफ आंदोलनधर्मिता के लिए हम पर्याप्त अवसर और अवकाश बनाएँ।

303, गुलमोहर निकेतन, वसंत विहार
(शांति निकेतन के पास), इन्दौर-10 (म.प्र.)

नेपाल में हिन्दी का अस्तित्व विगत से वर्तमान तक

तराई की समतल भूमि जनक नन्दिनी सीता की जन्म स्थली जनकपुर धाम, शान्ति के अग्रदूत बुद्ध की जन्मस्थली लुम्बिनी के कपिलस्तु जैसे पावन नगरी का देश है नेपाल । विश्व के सर्वोच्च हिमशिखर 8848 मीटर ऊँचे सगरमाथा जैसे अलौकिक सम्पदा से परिपूर्ण विलक्षण सौन्दर्य से भरे देश का नाम है नेपाल । अनगिनत नदियों और पहाड़ों के सौन्दर्य को अपने आप में समेटे, हिमाल से लेकर तराई और मेची से महाकाली तक एक अपूर्व सौन्दर्य का नाम है नेपाल । यहाँ की प्राकृतिक अकूत सम्पदा ही इसका परिचय है । कई भाषाओं और संस्कृतियों की भूमि है नेपाल । इस धरती पर जब भी हिन्दी की बात चलती है तो कहीं विरोध और कहीं समर्थन की आवाज बाहर आती है । जबकि भाषा का सवाल किसी भी पूर्वाग्रह से वंचित होना चाहिए यह मेरा मानना है । नेपाल के सन्दर्भ में तो हिन्दी के अस्तित्व और महत्ता को तो कोई नकार ही नहीं सकता । हाँ नकारेगा वही, जिसे इसका इतिहास पता नहीं ।

अनुसंधान एवं अध्ययन ही नहीं बल्कि अन्य भी कई दृष्टियों से नेपाल हिन्दी का एक ऐसा विशाल क्षेत्र है, जिससे हिन्दी जगत् अब तक लगभग अपरिचित सा रहा है । यहाँ के हिन्दी साहित्य का थोड़ा परिचय सर्वप्रथम महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने दिया, जब उन्होंने विद्यापति की कीर्तिलता एवं कुछ पदों को वहाँ से ढूँढ निकाला था । राहुल सांकृत्यायन ने भी उन व्यक्तियों की थोड़ी-बहुत चर्चा की है, जिन्होंने वहाँ हिन्दी के भंडार में योगदान दिया है। उनमें राजगुरु हेमराज शर्मा उल्लेखनीय हैं। सच कहा जाए तो नाथ संप्रदायी योगियों से लेकर जोसमनी संतों तक, मल्लकालीन राजाओं से लेकर शाहवंशीय नरेश एवं राजकुल के अनेक सम्मानित व्यक्तियों, सदियों से तिब्बत और भारत के साथ समान रूप से व्यापार करने वाली वहाँ की विशिष्ट नेवार जाति से लेकर पर्वतीय प्रदेश में रहने वाले विद्वान् ब्राह्मण वर्ग और वहाँ के शूरवीर श्रेष्ठ क्षत्रीय वर्ग तथा सेना आदि में काम करने वाली अन्य कई जातियों ने हिन्दी की साहित्य धारा और भाषायी प्रवाह को वहाँ सदा गतिशील बनाये रखा । यह ठीक है कि हिन्दी इस विकास धारा के साथ साथ उनकी अपनी मातृभाषा, खासकर नेपाली और नेवासी भी विकसित होती गई है । परंतु विकास ने हिन्दी के साथ उनके संबंध को और गहरा बनाया है । इसके पीछे संस्कृति और धर्म आदि की वह समान धुरी काम कर रही है, जिससे दोनों ही देशों के साहित्यिक चक्र बराबर जुड़े रहे हैं । यही कारण है कि नेपाल उस संस्कृति, धर्म और साहित्य की रक्षा में भारत का सदा से हाथ बँटाता रहा है, जिसे विदेशी आक्रमणकारी तलवार और साजिश के बल पर नष्ट करने में लगे रहे । नेपाल के संग्रहालय, सरकारी व निजी पुस्तकालयों तथा व्यक्तियों के पास सुरक्षित अनेक हस्तलिखित और प्रकाशित सामग्री इस बात का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं । यों देखा जाए तो डेढ़ करोड़ की आबादी वाले इस देश में लगभग पचहत्तर प्रतिशत लोग हिन्दी का किसी न किसी रूप में प्रयोग करते हैं। बाकी आबादी में उन निरे अशिक्षित हिमालय की ऊपरी या सुदूर उत्तरी सीमा पर रहने वाले तिब्बती या उनके मिश्रित नस्ल के लोगों को ले सकते हैं, जिनका कोई संपर्क निचले भाग या तलहटी के लोगों से नहीं हो पाता । परंतु ऐसे लोग भी सामान्य व्यवहार की हिन्दी की समझ जरूर रखते हैं, क्योंकि तम्बाकू या अन्य कई चीजों के हिन्दी भाषी व्यापारी वहाँ भी पहुँचते ही रहते हैं । वास्तव में नेपाल की तराई और पहाड़ के लोगों के बीच आपसी आदान-प्रदान और संपर्क ने वहाँ पहाड़ी क्षेत्रों में हिन्दी को और भी सुलभ और ग्राह्य बनाया ।

डॉ. श्वेता दीप्ति

जहाँ तक हिन्दी के विस्तार की बात है तो यह सर्वमान्य है कि हिन्दी अपने भौगोलिक विस्तार, ऐतिहासिक प्राचीनता तथा साहित्यिक महत्व इन तीनों गुणों के कारण आज विश्व की एक महत्वपूर्ण भाषा है । विश्व परिदृश्य में हिन्दी के महत्वपूर्ण अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता है । विश्व की दूसरी सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी अपना स्थान कायम कर चुकी है । हिन्दी एक सहज सरल और सरस भाषा है यह सर्वविदित है । हिन्दी भाषा साहित्य ऐतिहासिक दृष्टि से संसार की सबसे महत्वपूर्ण भाषा साहित्य, संस्कृत की प्रतिनिधि है । जब संस्कृत सामान्य जन के लिए कठिन होती गई तो आर्यावर्त्त में हिन्दी का प्रचार बढ़ता गया । हिन्दी संस्कृत पालि या प्राकृत की तरह केवल ब्राह्मणों, बौद्धों और जैनों के धार्मिक साहित्य का माध्यम नहीं बनी । हिन्दी भाषा के माध्यम से एक ऐसी सामाजिक संस्कृति का प्रसार किया गया जिसके निर्माता कबीर, रैदास, सूर और तुलसी जैसे विभिन्न सम्प्रदाय के साहित्यकार थे ।

नेपाल के इतिहास में भी हिन्दी अपनी पूर्ण प्रतिष्ठा के साथ स्थापित थी । नेपाल में शिक्षा के विकास तथा प्रजातान्त्रिक पुनर्जागरण में हिन्दी भाषा साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है । पुरानी पीढ़ी के नेपाली नेताओं तथा विद्वानों के लिए आधुनिक शिक्षा के प्रमुख श्रोत हिन्दी क्षेत्र में वाराणसी, पटना, लाहौर और कलकत्ता के विश्वविद्यालय रहे हैं । भारत के नेपाल मित्र हिन्दी विद्वान तथा कवियों ने नेपाल में नव जागरण लाने में अद्वितीय योगदान दिया । इनमें महापंडित राहुल सांकृत्यायन तथा फणीश्वरनाथ रेणु का नाम अविस्मरणीय है ।

यों तो हर भाषा की अपनी महत्ता होती है इसलिए किसी भी भाषा के प्रति दुराग्रह की भावना नहीं होनी चाहिए । भाषा वह सरिता है जिसमें व्यक्ति जितनी डुबकी लगाता है उसकी गहराई से उतनी ही मोती खोज निकालता है । नेपाल में हिन्दी के अस्तित्व का अगर सवाल है तो भारत के बाद नेपाल ही विश्व का एक मात्र देश है जहाँ हिन्दी पढ़ने, लिखने एवं बोलने वालों की सर्वाधिक संख्या है। नेपाल में हिन्दी का एक हजार वर्षों से अधिक का इतिहास है और आज भी इसकी महत्ता कायम है । हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा अवश्य है, किन्तु वह नेपाल की प्राचीन भाषा भी है । "सन् 840 ई. में कपिलवस्तु में जन्में कुक्कुरीपा और साढ़े छः सौ वर्ष पूर्व दांग में हुए राजा रतन, जो पीछे रत्ननाथ के नाम से प्रसिद्ध हुए और साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व जनकपुर धाम जानकी मंदिर के संस्थापक रहे महात्मा सूरकिशोर दास जी से आज तक का क्रमबद्ध इतिहास है । " (नेपाल में हिन्दी की अवस्था, राजेश्वर नेपाली)

हिन्दी के लिए गोपाल सिंह नेपाली ने कहा था, "हिन्दी है जन-जन की बोली इसे अपने आप पनपने दो ।" हिन्दी का नेपाल में चाहे जितना भी विरोध होता हो पर यह किसी न किसी रूप में, चाहे वह साहित्यिक हो या टी. वी., सिनेमा अथवा संगीत हो आज भी जन-जन के हृदय में अपना स्थान बनाए हुए है । आधुनिक नेपाल के राष्ट्र निर्माता पृथ्वीनारायण शाह स्वयं हिन्दी भाषा के कवि थे । इतना ही नहीं रणबहादुरशााह, उपेन्द्रविक्रम, सुरमाया, शशिधर, जगतमंगल, दलजीतमंगल, अभयानन्द आदि ने भी हिन्दी भाषा को अपनाया और लिखा । सन् 1768 में पृथ्वीनारायणशाह के राजवंश स्थापना के पूर्व भक्तपुर के राजा सुमति जयजितमित मल्ल, रामचन्द्र एवं वीरनारायण, योगेन्द्रमल्ल आदि ने अनेक हिन्दी नाटक की रचना की ।

नेपाल को प्रमुख भाषाओं की दृष्टि से अगर क्षेत्रों में बाँटा जाय तो उसके तीन क्षेत्र होते हैं- पहाड़ी क्षेत्र जहाँ नेपाली और उसकी बोलियाँ बोली जाती हैं, काठमान्डू उपत्यका अन्य क्षेत्र जहाँ प्रमुख रूप से नेवारी या उसकी उपबोलियाँ बोली जाती हैं और तराई मधेश तथा भीतरी तराई मधेश क्षेत्र जहाँ प्रमुख रूप से मैथिली, भोजपुरी, अवधी या हिन्दी बोली जाती हैं ।

नेपाल में हिन्दी का प्रयोग कोई 600 वर्ष से भी अधिक समय से होता आया है । प्राचीन शिलालेखों और साहित्य रचना से लेकर संगीत, नाट्यमंच, औषधि विज्ञान, शिक्षा आदि क्षेत्रों में हिन्दी का अनवरत प्रभाव आज तक दीख रहा है । वस्तुत: देखा जाय तो हिन्दी से नेपाल का लगाव बिल्कुल प्राकृतिक और सहज रूप में बना हुआ है । यही कारण है कि नेपाली जनमानस और पवित्र भूमि नेपाल हिन्दी प्रयोग की बहुमुखी धाराओं से सिंचित होती आई है ।

सामान्यतया शिलालेख, ताम्रपत्र आदि में संस्कृत भाषा का प्रयोग होता है पर नेपाल में कई ऐसे प्राचीन शिलालेख और ताम्रपत्र मिलते हैं जिन पर हिन्दी भाषा में संदेश अंकित हैं । नेपाल की साहित्य रचनाओं में भी हिन्दी का प्रयोग मिलता है । यह प्रभाव दो तरह से प्राप्त होता है । पहला शुद्ध हिन्दी भाषा का प्रयोग और दूसरा रचनाओं में कहीं कहीं हिन्दी शब्दों का प्रयोग । नेपाल में हिन्दी पत्रिका का प्रकाशन सर्वप्रथम वि. सं. 2008 में हुआ था, जिसका नाम तरंग था । उसके बाद तो कई पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ ।

किसी भी राष्ट्र की उन्नति वहाँ की जनता और शिक्षा पर निर्भर करती है । शैक्षिक विकास के क्रम में नेपाल के इतिहास में हिन्दी भाषा के योगदान को तो चाहकर भी नकारा नहीं जा सकता है। भारत की स्वतन्त्रता के साथ ही उसका प्रभाव नेपाल में भी पड़ा । विक्रम सं. 2007 में विगत 104 वर्ष से चले आ रहे राणा शासन का अन्त हुआ । इसके बाद ही देश में विकास हेतु कुछ कदम परिचालन हुए, इसी के तहत वि. सं. 2009 में शिक्षा समिति का गठन किया गया । सरदार रुद्रराज की अध्यक्षता में 46 सदस्यों का एक आयोग गठन किया गया और यह तय हुआ कि पाँच वर्षों के भीतर देश में एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की जाएगी । राजा त्रिभुवन की यह हार्दिक इच्छा थी कि ऐसा हो पर विभिन्न कारणवश यह परिकल्पना मूर्त्त रूप नहीं ले पाई । उनके इस स्वप्न को साकार करने हेतु बडा महारानी कान्तिराज लक्ष्मी देवी ने वि. सं. 2012, चौत्र महीने के 18 गते को त्रिभुवन विश्वविद्यालय योजना आयोग की घोषणा की जिसमें 8 सदस्य शामिल थे । इस आयोग ने त्रिभुवन विश्वविद्यालय सम्बन्धी पहले चरण का कार्य राजा त्रिभुवन के 12वें जन्मोत्सव पर शुरु किया । तत्पश्चात् 53वें जन्मोत्सव पर स्नातकोत्तर की पढ़ाई शुरु हुई । विश्वविद्यालय की स्थापना से पहले एस. एल. सी बोर्ड और स्नातक तह की परीक्षा बिहार के पटना बोर्ड से संचालित होती थी । काठमान्डू स्थित त्रिचन्द कालेज भी पटना विश्वविद्यालय से ही सम्बन्धन प्राप्त था । प्राय: सभी शिक्षक भी भारतीय मूल के ही थे । तराई के सभी विद्यालयों में अध्ययन का माध्यम हिन्दी ही थी । नेपाल में शुरुआत से ही शिक्षा के क्षेत्र में हिन्दी का प्रयोग होता आया है । बाल शिक्षा से लेकर विद्यालय और महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अस्तित्व रहा है । शिक्षा के साथ ही संगीत के क्षेत्र में भी हिन्दी का प्रभाव रहा है । भारत के संगीतज्ञों के द्वारा संगीत की शिक्षा की व्यवस्था के कारण हिन्दी का प्रभाव देखने को मिलता है ।

नेपाल और भारत के बीच सांस्कृतिक, आर्थिक, शैक्षिक और कदाचित राजनैतिक निकटता के कारण यहाँ हिन्दी का अस्तित्व हमेशा से रहा है । भारत और नेपाल के बीच पाँच सौ मील की खुली सीमा है । नेपाल की तराई को भारत के उत्तर प्रदेश एवं बिहार से

केवल कुछ हाथों की चौडाई वाली एक सीमारेखा अलग करती है । जिसे यहाँ दसगजा कहते हैं । यहाँ कई गाँव ऐसे हैं जिनके आधे नागरिक नेपाली हैं और आधे भारतीय, इस स्थिति में दोनों देशों का एक दूसरे पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है ।

भारत में हिन्दू संस्कृति की संवाहिका के रूप में जब हिन्दी भाषा को व्यापक प्रतिनिधित्व का अधिकार मिला तो स्वाभाविक रूप से समान सांस्कृतिक धारा में बह रहे नेपाल ने तथा वहाँ के जनमानस ने भी हिन्दी को उसी सहजता के साथ अपना लिया । इस प्रकार दोनों देशों की सामाजिक संरचना एक सी होने के कारण नेपाल में हिन्दी के प्रति कोई अजनबीपन की भावना नहीं थी । वास्तव में भाषा और संस्कृति का सम्बन्ध ही अनूठा होता है । ग्रीनबर्ग ने संस्कृति के लिए भाषा को आवश्यक शर्त ही नहीं वरन भाषा को संस्कृति का आवश्यक अंग माना है । इसलिए नेपाल में हिन्दी को स्थान मिलना कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

नेपाल की राष्ट्रभाषा नेपाली की भी हिन्दी के समान देवनागरी लिपि, समान भाषिक स्वभाव साहित्यिक प्रवृतियों ने भी नेपाल के बीच सहज रूप से हिन्दी के लिए सामाजिक और सांस्कृतिक मनोभूमि तैयार की ।

नेपाल और भारत के बीच प्राचीन काल से ही व्यापारिक सम्बन्ध रहा है । अविकसित अवस्था से लेकर आज की अल्पविकसित अवस्था तक की दौर में नेपाल भारती पूँजी और व्यापारियों का एक अच्छा बाजार रहा है ।

1960 से 65 तक भारत और नेपाल के बीच अवाध रूप से व्यापार चलता था । परन्तु अभी सीमा शुल्क लगाए जाने के कारण थोड़ी शिथिलता आ गई है । नेपाली व्यापारी और आम उपभोक्ताओं का भारत आना जाना रहता है इसलिए भी इनकी भाषा हिन्दी हो गई है ।

नेपालियों का भारतीय सेना में भर्ती होना भी हिन्दी के प्रभाव को दर्शाता है । प्राय: नेपाली सीमा के समीपस्थ भारतीय शहरों कस्बों में यहाँ के राजनीतिज्ञों का आना जाना रहता था इसलिए नेपाल की राजनीति पर भी भारत और हिन्दी का प्रभाव हमेशा से रहा है ।

नेपाल में हिन्दी की फिल्मों और हिन्दी गानों का अच्छा बाजार है । यहाँ की जनता इसे भरपूर प्यार देती है और आजकल तो छोटे पर्दो ने हर घर में अपना स्थान बना लिया है । जिसके कारण हिन्दी बोलना और समझना और भी आसान हो गया है । हिन्दी गीत संगीत और फिल्मों ने इसे और भी महत्वपूर्ण बना दिया है ।

इस सभी तथ्यों के बावजूद विडम्बना है कि आज तक नेपाल में हिन्दी को उचित और सम्मानित स्थान प्राप्त नहीं हो पाया है। हम सब जानते हैं कि भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में नेपाली भाषा को मान्यता प्राप्त है किन्तु हम नेपाल के संविधान में ना तो हिन्दी को स्थान दिला पाए और ना ही भारत से आई बेटियों के अधिकार को सुनिश्चित करवा पाए जिसका परिणाम विगत के दिनों में स्पष्ट दिख रहा है कि जिस रोटी और बेटी का नारा देकर दो देशों के सम्बन्धों की मजबूती की बात हम किया करते थे उसमें कमी आ रही है और धीरे–धीरे ये सिर्फ एक नारा बन कर रह जाएगा इसके आसार नजर आ रहे हैं । जहाँ मधेशी दूसरे दर्जे के नागरिक हैं वहीं भारत से आई हुई बेटियाँ तो तीसरे दर्जे की कतार में खड़ी हैं । न तो उन्हें सम्मान मिला और न ही उनकी भाषा को । उनकी शिक्षा यहाँ आकर अधूरी रह जाती है । इन सभी वस्तुस्थिति पर ध्यान देना आवश्यक है और हमारी युवा पीढी को आगे आने की आवश्यकता है । यह कभी मत सोचें कि हिन्दी आगे बढती है तो किसी और भाषा को बाधित करेगी । आप मानें या ना मानें किन्तु हिन्दी ही वो मंच रही जिसने विश्वपटल पर कई भाषाओं को परिचित कराया । अपनी सोच को बृहत करें, एक खुला आकाश दें । संकीर्णता विकास की राह में बाधक बनती है यह हम आप सभी जानते हैं फिर एक सहज और विश्वस्तरीय भाषा से विलगाव क्यों ?

सहायक पुस्तक

नेपाल में हिन्दी : डॉ. कृष्णचन्द्र मिश्र, प्रकाशन विद्या विहार नई दिल्ली

नेपाल में हिन्दी और हिन्दी साहित्य : डा सूर्यनाथ गोप, किताब महल इलाहाबाद

नेपाल के हिन्दी लेखक : डा रामदयाल राकेश, प्राच्य प्रकाशन वाराणशी

नेपाल में हिन्दी की अवस्था : राजेश्वर नेपाली

नेपाल का इतिहास : काशीप्रसाद श्रीवास्तव, आत्माराम एंड सन्स नई दिल्ली

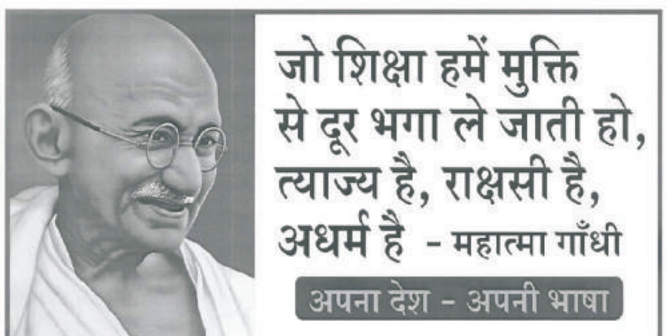

अनुवाद का अनुभव

संसार प्रविधि की विकास के द्रुत यान में चढ़कर सिमटने से कहाँ-कहाँ के कोनों-कोनों के लोगों के बीच में संपर्क स्थापित हो रहा है, व्यापार का विस्तार हो रहा है, अनुभूति के विनिमय की संभावना भी बढ़ रही है । भावना, अनुभव और अनुभूतियों के आदान-प्रदान से संस्कृति, दर्शन एवं जीवन पद्धतियोंतक के आदान-प्रदान करने में भी मदद मिलती है । लोग जैसे पढ़कर सीखते हैं वैसे ही अनुभव करके, वार्तालाप एवं विचारों का विमर्श करके भी सीखते हैं जिससे अंततः सभ्य एवं सम्मुन्नत समाज के निर्माण के लिए बल मिलता है । इसके लिए संसार की अनेकों भाषा में लिखी रचनाओं, उनमें अभिव्यक्त भावनाओं, अनुभवों, अनुभूतियों और संस्कृतियों का अनुवाद कर दूसरी भाषा, भूगोल, संस्कृति और परंपरा के बीच में पहुँचने तथा उसके बारे में विमर्श होने से ज्ञान, भावनाओं, अनुभूति, संस्कृति एवं सभ्यता का विस्तार होता है । इस सन्दर्भ में साहित्यिक रचनाओं के अनुवाद की चाह होना, अनुदित होकर विभिन्न किस्म की सीमाओं एवं सीमितताओं को लांघकर फैलने की इच्छा करना एवं फैलना स्वभाविक ही माना जाना चाहिए । इसी तरह अपनी आधारभूमि, भाषा, संस्कृति एवं सभ्यता में बहुत ही लोकप्रियता हासिल करने वाले अथवा बहुत ही पढ़े जाने वाले लेखक भी दूसरी भाषा और संस्कृति में अनुवाद के बिना जाते हैं तो बिलकुल अनजान, मूर्ख और बच्चों की तरह अबोध लगते हैं । इस अबोधपन से मुक्ति की चाह भी अनुवाद के महत्त्व और आकांक्षा को दर्शाती है ।

लेकिन अनुवाद अच्छा नहीं हुआ तो पाठकों को लेखक क्या कह रहा है इस बात का अच्छा सम्प्रेषण नहीं पहुँचेगा । यह पाठकों में अनुभूति तथा उत्तेजना का संचार एवं विस्तार नहीं करती । जो रचनाएँ अनुभूति और उत्तेजना का संचार एवं विस्तार नहीं करता वे प्रभावोत्पादक नहीं होते और अंततः पाठक स्वीकार नहीं करता । अस्पष्ट और खराब अनुवाद से पाठकों को उस भाषा के साहित्य के प्रति वितृष्णा उत्पन्न कराने का खतरा भी उतना ही रहता है ।

अनुवाद कार्य एक सृजनशील कार्य है तो काफी हद तक प्राविधिक कार्य भी है । खास संरचना में रहकर खास विचार और अनुभूतियों में अर्थान्तर न करते हुए उसे दूसरी भाषा और संस्कृति में लेकर जाना आसान काम नहीं है । कितनी अवस्थाओं में अनुवाद करते समय अनुभूति और विचारों को मरने न देने के लिए कई-कई बार लिखना पड़ता है । शब्दों के चयन में बहुत ही सावधानी बरतनी पड़ती है । कई अवस्थाओं में वही अर्थ देने वाले शब्द भी वास्तव में वही अर्थ नहीं दे रहे होते । मैं अपने अनुभव की बात करूँ तो स्कॉटलैंड की प्रसिद्ध कवियत्री टेस्सा रेंसफोर्ड द्वारा मेरे कविता संग्रह 'कविता में पहाड़' के अंग्रेजी में अनूदित कविताओं के सम्पादन का प्रसंग याद आता है । उन्होंने कई जगहों पर, "तुमने ऐसा कहा है तो यहाँ प्रयोग किए गए शब्दों से ज्यादा फलाना शब्द सटीक अर्थ व्यक्त करता है । शब्दों को बदलो " कहा । इसी तरह भाषा परिवर्तन होते रहता है ।

भीष्म उप्रेती

फलाना अनुभूति को अभिव्यक्त करने के लिए प्रयोग किए गए वाक्य शुद्ध है लेकिन आज अँग्रेजी में उसी बात को उसी तरह न कहकर इस तरह कहा जाता है कहते हुए उन्होंने कुछ अलग तरीके से सम्पादन किया । इन परिवर्तनों और सुझावों को मैंने अपनी कविताओं के अनुवादकों के समक्ष रखा । उन्होंने हार्दिक रूप से इसे स्वीकार किया और उसी के अनुरूप परिमार्जन किया गया । अनुवादक बहुत प्रतिभाशाली, शब्द और अर्थों को नियंत्रण कर सकने वाला सामर्थ्यवान एवं स्रोत भाषा और संपर्क भाषा संस्कृति और परंपरा का ज्ञान रखने वाला ना हों तो अच्छा करना चाहते हुए भी बाधा होने की संभावना उच्च रहती है । अनुभूति और भावनाओं को व्यक्त करते हुए लेखक ने किस शब्द संरचना एवं मीटर का प्रयोग किया है उसी ढंग से अनुवादक को शब्दों का चयन एवं संरचना का निर्माण करना चाहिए । इसीलिए अनुवाद कार्य प्राविधिक कार्य है । फिर शब्दों पर नियंत्रण रखने की शक्ति और सामर्थ्य लेखक के जितना ही अनुवादक में भी होना चाहिए, अर्थों को जीवंत एवं संप्रेष्य बनाने के लिए अनेकों किस्म से अभिव्यक्त करना आना चाहिए तथा लेखक की वास्तविक रचना पर अनुवादक को हावी भी नहीं होना चाहिए इसीलिए यह एक सृजनात्मक क्रिया भी है । नई कविता लिखने के लिए जैसे कवि को मूड और वातावरण की जरूरत होती है ठीक उसी तरह अनुवादक को भी मूड और वातावरण की जरूरत होती है। अनुवाद को मूल रचना के दुरुस्त और अर्थ सम्प्रेषण को प्रभावकारी बनाने के लिए अनुवादक को होने वाली बेचौनी का अनुभव नई सृजना करने जैसा ही होता है- मुझे मालूम है । खुद मैंने भी विदेशी भाषा की कविताओं तथा कहानियों का नेपाली में अनुवाद करते हुए कई बार न कर पाने की वजह से यूँ ही छोड़ दिया है । मेरी कविताओं का अनुवाद करने वाले अनुवादक मित्र भी कोई कविता तुरंत अनुवाद कर देते हैं तो कोई-कोई कविताओं का अनुवाद करने में महीनों लगा देते हैं ।

अनूदित साहित्य कैसा होना चाहिए ? जैसे अंग्रेजी मातृभाषी लिखते हैं कि जैसे विदेशी मातृभाषी लिखते हैं ? कुछ लोग जैसे अंग्रेजी मातृभाषी लिखते हैं ठीक उसी तरह का अनुवाद चाहते

हैं । वे लोग नेपाली से अंग्रेजी में कविताओं के अनुवाद करने के संदर्भ में कहते हैं– "अंग्रेजों के लिए ऐसी भाषा लिखकर कहाँ होगा ? उन लोगों की तरह ही लिखना चाहिए ।" मैं सिर्फ चुपचाप सुनता हूँ क्योंकि मैं इस विचार से सहमत नहीं हूँ । कोई कृति अनूदित है तो वहाँ जिस साहित्य से अनुवाद किया गया है, उस साहित्य की लेखन शैली, परंपरा, उस साहित्य में किए जाने वाले बिम्बों का प्रयोग तथा उनके स्रोत, उस साहित्य में लेखक की उपस्थिती तक स्पष्ट दिखनी चाहिए । मुख्य बात यह है कि जब साहित्य का अनुवाद किया जाता है तब लेखक की अनुभूति, भोगे हुए अनुभव और कही गई बात ठीक उसी रूप में अनूदित साहित्य पढ़ने वालों को भी समझ में आनी चाहिए । फिर से अपने अनुभव की बात करता हूँ । अंग्रेजी मातृभाषी क्रेग बेस्ट के साथ बैठकर मेरी एक यात्रावृत किताब के अंग्रेजी अनुवाद का सम्पादन कर रहा था । उन्होंने एक अनुच्छेद को दिखाते हुए कहा– "मैंने इसे अलग तरीके से लिखने के लिए भी सोचा लेकिन इस तरह लिखने से यह अनुवाद न होकर अंग्रेजी में लिखने जैसा हो जाएगा, इसीलिए ऐसा नहीं किया।"

मैंने कहा – "अगर अच्छा होता है तो करना चाहिए था न ।"

उन्होंने कहा– "नहीं, इस अनुच्छेद के सभी वाक्य शुद्ध हैं । यह पढ़कर मैं तुम्हारी अनुभूतियों को महसूस कर सकता हूँ और तुमने जो कहा है वही समझता हूँ । मुख्य आवश्यक बात यही तो है । समझे, अनुवाद होने से तुम लेखक ही खो गए तो वो अच्छा अनुवाद नहीं है। अनुवाद पढ़ते हुए पाठकों को उसके लेखक तक पहुँचने देना चाहिये।

मुझे क्रेग की बात अच्छी लगी । मैंने उन्हें उस अनुवाद को और परिष्कृत करने के लिए नहीं कहा । मैंने अपनी अंग्रेजी मित्र डेब्रा के साथ रहकर अनुवाद संबंधी बहुत काम किया है । वो मेरी अत्यंत नजदीकी और मेरे परिवेश एवं लेखन को अच्छी तरह समझने वाली मेरी मित्र हैं । उसने मेरे दो कविता संग्रहों और एक यात्रावृत्त अनुवाद कृतियों का सम्पादन किया है । इससे मुझे अनुवाद करते हुए आने वाली सरलता और मुश्किलों के संबंध में बहुत–सी चीजें जानने को मिला । भाषा, विचार, लेखन शैली, हमारे सोचने एवं समझने का तरीका, हमारे ज्ञान उत्पन्न वाले दर्शन सब कुछ हम जो संस्कृति और परंपरा मानते हुए आ रहें हैं उसी से निर्देशित और प्रभावित होती है । इसीलिए एक भाषा के साहित्य में प्रयुक्त बिम्ब दूसरी भाषा के साहित्य में जाते हैं तो ठीक उसी तरह के भाव ना भी मिलते हों, उस किस्म की संस्कृति और परंपरा नहीं है तो भाव सम्प्रेषण करने के लिए अन्य कई उपाय और माध्यमों की खोज भी करनी पड़ती है । मेरी प्रेम कविताओं पर काम करते हुए एक जगह पर डेब्रा रुक गई । पूछने लगीं– " यह तुमने क्या कहा है ?"

मैंने कविता पढ़ी । मैंने (नेपाली में) लिखा था –
तुम्हें मेरी दो आँखों में रखना चाहता हूँ –
शशी भण्डारी जीने अनुवाद करके लिखा –
My desire is to hold you in my eyes

वो इस बात का मतलब नहीं समझ पायीं तो पूछने लगीं। कहने लगीं– "अंग्रेजी में आँखों में रखना नहीं कहा जाता । इससे भाव व्यक्त नहीं होता ।" तब हमने सलाह किया और अंत में उपाय निकाला ।

My desire is to hold you before my eyes

इससे वही भाव तो नहीं आया फिर भी सबसे नजदीक का भाव सम्प्रेषण तो होने लगा । अनुवाद का काम करते हुए डेब्रा के साथ का ही एक दूसरा प्रसंग । वो मेरी प्रेम कविताओं के अनुवाद का सम्पादन करते–करते कई जगहों पर शशी जी द्वारा किए गए अनुवाद को ठीक–ठीक ना समझ पाने से पूछती रहती थीं । मैं कभी उसे परंपरा एवं संस्कृति के विविध पक्षों से लिए गए बिम्बों के अर्थ समझाते रहता था । वो उन्हें फूटनोट बनाती थी । इसी तरह कई जगहों पर जब मैं उसे समझा देता तो वो समझकर हँसती थी और अनूदित वाक्यों का पुनर्लेखन करती थी । किसी–किसी कविता का सम्पादन करते हुए तो उसने मूल अनुवाद से भी लगभग नब्बे प्रतिशत तक अलग बना दिया । कई जगहों पर शब्द बदले तो ज्यादातर वाक्यों को और भी कसा हुआ और व्याकरणगत त्रुटियों में सुधार किया । इससे मुझे यह पता चला कि केवल अनुवाद कर देना भर ही उपलब्धि नहीं है । एक अच्छा अनुवाद और उस अनूदित भाषा के साहित्य के प्रति रुचि रखने वाले तथा उस भाषा के मातृभाषी से एक बार सम्पादन तो अवश्य कराना चाहिए । नहीं तो छोटी–छोटी गलतियाँ रह जाती हैं और वो अनुवाद के गुणस्तर एवं अनूदित साहित्य के प्रवाह को अलग–थलग कर देती है । सिओल में सोगांग विश्वविद्यालय में कई वर्षों तक अंग्रेजी साहित्य पढ़ाकर सेवा निवृत्त हुए बिलायती प्राध्यापक ब्रदर एंथोनी के साथ अनुवाद से संबन्धित एक लम्बी वार्तालाप करने का अवसर मिला । उन्होंने कोरियन कविता, सिजो, उपन्यास, आत्मकथा आदि की तीस पुस्तकों का अंग्रेजी में अनुवाद किया है जो अमेरिका तथा कोरिया से प्रकाशित हैं। वे कहते हैं– "कोरियन भाषा से अंग्रेजी में अनुवाद करना बहुत ही मुश्किल है । कई शब्द तथा अर्थ तो अंग्रेजी में है ही नहीं । कोरियन भाषा की बुनावट और उनमें अभिव्यक्त होने वाले अर्थ विशिष्ट हैं । उनमें निहित कोरियन सांस्कृतिक पक्ष एवं उनके द्वारा निर्मित बिम्बों का अनुवाद ही नहीं होता । लेकिन अनुवाद तो करना ही है, कोरियन साहित्य को संसार भर फैलना भी है ।"

वास्तव में यह सत्य है । अनुवाद कार्य बहुत ही जटिल होने के बावजूद भी इसके बगैर आज के प्रतिस्पर्धात्मक विश्व में फैल हीनहीं सकते । हमारी नेपाली कविता और साहित्य की अन्य विधाओं की कृतियों का भी देर सबेर अनुवाद किए बगैर सुख ही नहीं है । अनुवाद नहीं हुआ तो दूसरे की संस्कृति, सभ्यता और भाषा के आगे हमेशा मूर्ख, निरीह और बच्चे बने रहेंगे । अभिव्यक्त न हो पाने की पीड़ा से ज्यादा पीड़ादायक कोई और हो नहीं सकता। इसीलिए अनुवाद होना अथवा करना कई अवस्थाओं में इच्छा की तरह दिखे भी तो काफी हद तक बाध्यता ही है । सन 1999-2000 में मैं जब स्नातकोत्तर करने के लिए बिलायत में रहा तो फुर्सत के समय पर मैंने बिलायती साहित्यकारों से संगत करना चाहा । एक, दो प्रयत्नों में ही कुछ असहज-सी स्थितियां अड़चने बनकर खड़ी हो गई । उन लोगों के पास दिखाने के लिए कवितायेँ थीं, कहानियाँ थीं, उपन्यास और निबंध थे । अच्छे-अच्छे साहित्यिक जर्नल थे । मैं भी नेपाली कवि और निबंधकार हूँ, हम नेपालियों का भी साहित्य है यह कहने के अलावा मेरे पास और कुछ भी नहीं था । बाद में तो मुझे उन लोगों से मिलने पर भी शर्मिंदगी-सी महसूस होने लगी । जब मुझे यह लगने लगा कि मैं उन लोगों के समृद्ध साहित्य के तले दबे जा रहा हूँ तो मैंने बिलायती लेखकों से मिलने की इच्छा को ही त्याग दिया और पढ़ाई की ओर ध्यान देने लगा । बाकी फुर्सत में कविता लिखा, घूमा । बाद में नेपाल में लौट आने के बाद भी उस लघुताभास ने मुझे दबोचना नहीं छोड़ा और फिर मैं अपनी कविताओं के अनुवाद करवाने का प्रयास करने लगा । दूसरी बार सन 2003 में पुनः बिलायत जाते वक्त मेरे साथ मेरी कविताओं के अंग्रेजी में अनुदित संग्रह 'समुद्र तथा अन्य कविताएँ' थी । केंटबरी में रहते हुए मैं कुछ बिलायती लेखकों से मिला और गर्व के साथ उनकी किताबों के साथ अपनी किताब की भी अदला-बदली की । बिलायती कवि तथा लेखक डॉ. डेविड हार्ड ने मेरी उस किताब को पढ़ने के बाद मेरी प्रेम कविताओं के संग्रह 'इकोज ऑफ लव' की भूमिका लिखी । मैंने कैथरीन पियर पॉइंट के साथ बार-बार संवाद किया क्योंकि मेरी उक्त किताब पढ़ने के बाद मेरी रचना के प्रति उनकी रूचि जगी थी । इस तरह पहली बार बिलायत भ्रमण में मूर्ख एवं बच्चे की तरह अनुभूति और भावनाओं को सम्प्रेषण ना कर पाने से बेचौनियों के बीच सिमटकर रहने वाला मैं दूसरी बार के भ्रमण में खुलकर बोल पा रहा था, हँस पा रहा था ।

उसी किताब के अंग्रेजी अनुवाद पढ़ने के बाद जापानी प्राध्यापक श्रीमती योसिको हिगुची ने मेरी कविताओं को जापानी भाषा में अनुवाद करके प्रकाशित किया । अंग्रेजी अनुवाद होने से ही मेरी कविताओं का एक संग्रह सर्बियन भाषा में अनूदित होकर नावी साद, सर्बिया से प्रकाशन की तैयारी में है । हाल ही में अलमा प्रकाशन, बेलग्रेड से मेरी यात्रावृत्त संग्रह'अन्नुपूर्ण परिक्रमा' सर्बियन भाषा में अनूदित होकर प्रकाशित हुई है । दूसरा यात्रावृत्त संग्रह 'नीला पानी और नीली भावनाए' कोरियन भाषा में अनुवाद हुआ है । इस तरह अनुवाद के पर निकलने से दूर-दूर के दूसरी भाषाओँ, दूसरी संस्कृति, भूगोल एवं सभ्यता के बीच में अनुभूति एवं भावनाओं को सुरक्षित उड़ने की आजादी मिलती है । कविताएं, साहित्य ही नेपाल नाम का कोई देश भी है, उसका भी साहित्य है, वहाँ भी इस तरह के कवि हैं यह संदेश फैलाती है ।

अनुवाद की आवश्यकता, सार्थकता एवं प्रभावकारिता इसी तरह दिखती है । विचार करने की चीज क्या है कि केवल अनुवाद के लिये जल्दबाजी करके उसके गुणस्तर तथा लेखक की शैली, भाषा एवं उपस्थिति को भूल जाएँ तो इसका फायदा नहीं नुक्सान ही होता है । इसके अलावा लक्षित पाठकों तक पहुंचाने के लिए बाजार प्रवर्द्धन में आने वाली चुनौतियाँ तो अभी बाकी ही है ।

अनुवाद इतना महत्वपूर्ण विषय होते हुए भी सांस्कृतिक, धार्मिक एवं संबंध के हिसाब से भी इतना नजदीक होना और नेपाली एवं हिन्दी दोनों मूल संस्कृत भाषा से विकसित भाषा होते हुए भी इन दोनों भाषाओं के साहित्य का पर्याप्त मात्रा में अनुवाद नहीं हो पाया है। हिन्दी से कुछ छिटपुट अनुवाद होकर भारतीय साहित्य कुछ हद तक नेपाल में प्रवेश करने से,बहुत से नेपाली हिन्दी भाषा में ही साहित्य पढ़ने वाले होने से भारतीय खासकर हिन्दी साहित्य के बारे में नेपाली लेखक वर्ग एवं साहित्य अनुरागी थोड़ी बहुत जानकारी और ज्ञान रखते हैं। लेकिन नेपाली भाषा में लिखा हुआ साहित्य भारत में पहुँचने में अवरोध है । किसी तरह पहुँच भी जाए तो अधिकांश भारतीय नेपाली भाषा जानने की अवस्था में ना होने से नेपाली साहित्य की विविध विधाओं को हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य में अनुवाद कर भारत से ही प्रकाशन करने की व्यवस्था कर सके तो इससे नेपाली साहित्य के बारे में विशाल भारत की जनता तथा साहित्यकार तक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और नेपाली साहित्य का आस्वादन से आनंद लाभ ले सकते हैं । ऐसा होने से सरकारी और गैर-सरकारी दोनों तरह से नेपाली से हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओँ में और भारतीय साहित्य को नेपाली भाषा में अनुवाद, प्रकाशन एवं प्रचार-प्रसार करने से दोनों पड़ोसी देशों के लिए लाभप्रद होगा ।

भीष्म उप्रेती, काठमांडू, नेपाल

लेखक नेपाल राष्ट्रीय बैंक (केन्द्रीय बैंक) में निदेशक हैं ।

''प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है ।''
- रामचन्द्र शुक्ल

क्रांतिकारी कवि त्रिलोचन और युद्ध प्रसाद

कवि वासुदेव सिंह त्रिलोचन आधुनिक काल के प्रगतिशील काव्यधारा के प्रमुख हस्ताक्षर माने जाते हैं। आधुनिक हिन्दी कविता की 'प्रगतिशीलत्रयी' के तीन स्तंभों में से वे एक थे। नागार्जुन एवं शमशेर बहादुर सिंह इस त्रयी के अन्य दो प्रमुख स्तम्भ थे। इनका जन्म उत्तर प्रदेश के सुल्तानपुर जिले के कटघरा चिरानी पट्टी में 20 अगस्त 1917 को जगरदेव सिंह के घर में हुआ था। उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से एम.ए. अंग्रेजी एवं संस्कृत में शास्त्री की उपाधि लाहौर से प्राप्त की थी। सुल्तानपुर जिले के छोटे से गाँव से बनारस विश्वविद्यालय तक के सफर में उन्होंने दर्जनों पुस्तकें लिखीं और हिन्दी साहित्य के भंडार को समृद्ध किया। शास्त्री बाजारवाद के घोर विरोधी थे। वे प्रयोग पर बहुत अधिक बल देते थे। उनका मानना था भाषा में जितने अधिक प्रयोग होंगे भाषा उतनी ही अधिक समृद्ध होगी। उन्होंने हमेशा ही नव सृजन को बढ़ावा दिया। नये लेखकों के लिए वे उत्प्रेरक और प्रेरणा स्रोत थे।

त्रिलोचन शास्त्री हिन्दी के अतिरिक्त अरबी और फारसी भाषाओं के निष्णात ज्ञाता माने जाते थे। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी खासे सक्रिय रहे। प्रभाकर, हंस, आज, समाज जैसी पत्र-पत्रिकाओं का उन्होंने अत्यंत कुशलता के साथ सम्पादन किया। त्रिलोचन जी 1995 से 2001 तक जन संस्कृति मंच के राष्ट्रीय अध्यक्ष भी रहे। इसके अलावा वाराणसी के ज्ञान मंडल प्रकाशन संस्था में भी काम करते रहे और हिन्दी व उर्दू के कई शब्दकोषों की योजना से भी आबद्ध रहे। उन्हें हिन्दी सानेट का साधक माना जाता है। उन्होंने इस छंद को भारतीय परिवेश में ढाला और लगभग 550 सानेट की रचना की। इसके अतिरिक्त गीत, गजल, कहानी और आलोचना से भी उन्होंने हिन्दी साहित्य को समृद्ध और सुशोभित किया। 1645 में उनकी पहली कविता संग्रह प्रकाशित हुई थी। "गुलाब और बुलबुल", "उस जनपद का कवि हूँ" एवं "ताप के तपे हुए दिन" आदि उनकी बहुचर्चित कविता संग्रह है। भाषा, शैली और विषय वस्तु सभी क्षेत्र में उन्होंने अपनी अलग छाप छोड़ी, अपना अलग मुकाम हासिल किया। समाज के कमजोर और पिछड़े वर्ग के पक्ष में ही उन्होंने कलम उठाया। वे मेहनतकश और शोषित पीड़ित समाज की दूर से आती आवाज थे। उनकी कविताओं में भारत के ग्रामीण और देहाती समाज का सचित्र वर्णन है। उन्होंने कविता के माध्यम से उस निम्न वर्ग को संबोधित किया जो कहीं दबी थी, कहीं जग रही थी और कहीं लज्जा में डूबी थी।

उस जनपद का कवि हूँ, जो भूखा दूखा है
नंगा है, अंजान है, कला नहीं जानता

पूनम झा

लोक भाषा अवधि एवं भाषाओं की जननी संस्कृत से त्रिलोचन ने प्रेरणा ली, इसीलिए उनकी कविता हिन्दी कविता की परंपरागत धारा से जुड़ी हुई है। मजे की बात यह है कि परंपरा से इतने नजदीक से जुड़े रहने के कारण ही इनके काव्यों में आधुनिकता की सुंदरता और सुवासिता मुखरित हो उठी है। उनकी कविताओं में आत्मविश्वास हर जगह हिलोरें लेता नजर आता है।

एक कुशल मणिकार की तरह अपनी कविता में उन्होंने गीत, गजल, सानेट, और कुंडलियाँ, बरबाँ, मुक्त छंद जैसे कविता के तमाम माध्यमों में लिखा परंतु सानेट (चतुष्पदी) के लिए वे अधिक ख्यात हुए। आधुनिक हिन्दी कविता में वे सानेट के जन्मदाता माने जाते हैं। त्रिलोचन ने अपने प्रतिभा के बल पर विजातीय सानेट का भारतीयकरण किया। रोला छंद को आधार बनाकर बोलचाल की भाषा और लय का प्रयोग करते हुए चतुष्पदी को लोकरंग में रंगने का कलात्मक काम त्रिलोचन ने किया। हस छंद में उन्होंने जितनी रचनाएं की स्पेंसर, मिल्टन और सेक्सपियर जैसे कवियों ने भी शायद नहीं किया। साहित्य में जितने भी सानेट के रूप-भेद किए गए हैं,उन सभी को त्रिलोचन ने अपने साहित्य में आजमाया और एक कुशल मणिकार की तरह सजाया।

त्रिलोचन शास्त्री को 1989-1990 में हिन्दी अकादमी में शालाका सम्मान से सम्मानित किया गया था। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए "शास्त्री" और "साहित्य रत्न" जैसे सम्मानित उपाधियों से विभूषित किया जा चुका है। साहित्य अकादमी पुरस्कार से भी उन्हें सम्मानित किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश हिन्दी समिति पुरस्कार, हिन्दी संस्था सम्मान, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान, भारतीय भाषा परिषद सम्मान आदि से भी वे सम्मानित हैं। प्रकाशित कृतियाँ ख्र धरती, गुलाब और बुलबुल, दिंगत, ताप के तपे हुए दिन, शब्द, उस जनपद का कवि हूँ, अरधान, तुम्हें सौपता हूँ, मेरा घर आदि है। संपादित मुक्तिबोध की कविताएं, कहानी संग्रह देशकाल आदि है। 9 दिसम्बर 2007 को गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश में वे सदा के लिए साकेत सिधार गए।

त्रिलोचन की कहानी अभिव्यक्ति में जिस प्रकार समाज के दबे-कुचले लोगों का स्वर उभरकर आगे आया है उसी तरह नेपाली साहित्यकार कवि युद्ध प्रसाद मिश्र ने भी समाज के दबे व पिछड़े लोगों की भावनाओं और छटपटाहट को अपनी कविता के माध्यम से

शेष पृष्ठ संख्या 38 पर

स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा-चिन्तन

इतिहास पुरुष स्वामी विवेकानन्द ने वसुधैव कुटुम्बकम की भावना को सम्पूर्ण विश्व में प्रचारित करते हुए अपनी ओजपूर्ण वाणी से भारतवासियों को जागृत करते हुए संदेश दिया है कि यदि भारत देश को अशिक्षा, कुसंस्कारों, असामाजिकता, संस्कारहीनता और दुर्बलता से मुक्ति दिलाना है तो जन शिक्षा को व्यापकता देनी होगी। श्रीरामकृष्ण ने भी कहा है कि "जब तक मैं जीवित हूँ तब तक सीखता रहूँगा। वह व्यक्ति वह समाज जिसके पास सीखने को कुछ भी नहीं है वह पहले से ही मौत के झबड़े में है।" स्वामी विवेकानन्द कहते हैं कि शारीरिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक रूप से जो भी कमजोर बनाता है उसे जहर की तरह त्याग दो। हमारा कर्त्तव्य हैं कि हम हर किसी को उसका उज्ज्वल आदर्श जीवन जीने के संघर्ष में प्रोत्साहित करे। जीवन में उच्चादर्शों को प्राप्त करने के लिए हम जितना ज्यादा बाहर आये और दूसरों का भला करें, हमारा हृदय उतना ही शुद्ध होगा और परमात्मा उसमें बसेंगे।

स्वामीजी का कथन है कि जिस शिक्षा द्वारा इच्छा शक्ति का प्रवाह और विकास लाया जाता है वह फलदायक होता है वही शिक्षा कहलाती है। स्वामीजी का राष्ट्रव्यापी उद्घोष कि "मेरी समस्त भावी आशाएं उन युवकों में केन्द्रित हैं जो चरित्रवान एवं बुद्धिमान हो।" उन्होंने आव्हान किया कि उठो मेरे शेरों ! इस भ्रम को मिटा दो कि तुम दुर्बल हो, तुम एक अमर आत्मा हो, सनातन हो, स्वच्छन्द जीवन हो। हमारी सोच ही हमें महान बनाती है।" हम वो हैं जिसे हमारी सोच ने हमें बनाया है। इसीलिए इस बात का ध्यान रखिए कि आप क्या सोचते हैं। शब्द गौण हैं, विचार प्रमुख हैं। वे दूर तक यात्रा करते हैं। अत: सुसंस्कारी शिक्षा की अनिवार्यता है। हमें ऐसी शिक्षा मिले कि हम हर किसी को उसका उच्चतम आदर्श जीवन जीने के संघर्ष हेतु प्रोत्साहित करें। किसी चीज से डरो मत। तुम अद्‌भुत काम करोगे। यह निर्भयता ही जो क्षणभर में आनन्द लाती है। कुछ मत पूछो, बदले में कुछ मत मांगों, जो देना है वो देगा। वो तुम तक वापस आयेगा पर उसके बारे में अभी मत सोचो।

स्वामी विवेकानन्द वेदान्त और पाश्चात्य शिक्षा दोनों को साथ रखते हुए शिक्षा द्वारा विश्व कल्याण की भावना को प्रसारित करना चाहते थे। स्वामीजी का शिक्षा के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण था उच्च आदर्शों की अभिप्राप्ति के लिए शिक्षा को ही सर्वोपरि साधन मानते थे। मानव विकास के लिए आचरण शुद्धि, भाईचारा, संवेदनशीलता, बंधुत्व की भावना, दलितों का उद्धार, नारी चेतना और समरसता की प्रधानता हेतु शिक्षा की अनिवार्यता है। शिक्षा द्वारा आज का बालक जब कल का नागरिक बने तो वह समाजसेवा, धार्मिक सद्‌भावना, जनशिक्षा और श्रेष्ठ नागरिकता की दिशा में प्रवृत्त होगा। विश्व शांति और अध्यात्म की दिशा में उन्मुख करने के लिए शिक्षा एक महत्त्वपूर्ण संसाधन है। शिक्षा द्वारा ही अभूतपूर्व सामाजिक परिवर्तन संभव हैं। स्वामीजी का शैक्षिक चिन्तन जन-कल्याणकारी होने के कारण ही विश्व समुदाय में आदरणीय रहा। यह गर्व की बात है कि स्वामीजी ने अपने शैक्षिक चिन्तन द्वारा ही विश्व पटल पर अपना धर्म ध्वज लहराया। उनका जीवन दर्शन व शैक्षिक चिन्तन आदर्श, अनुकरणीय तथा लोकोपकारी सिद्ध हुआ।

भारत देश एक बहुरंगी देश है। भाषा, आचरण, भाव, विचार, पहनावा, रीति-रिवाज, संस्कार तथा जीवन शैली में मित्रता होते हुए भी सभी को एक तत्व के रूप में मानते हुए शिक्षा से समाविष्ट किया है। स्वामीजी सभी धर्मों को समान मान्यता देते रहे हैं। स्वामी जी के अनुसार शिक्षा मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है। सम्पूर्ण शिक्षण प्रशिक्षण का उद्देश्य मनुष्य निर्माण का ही रहा है। वर्तमान में शिक्षा व शिक्षण पर पाश्चात्य प्रभाव अवश्य है किन्तु स्वामीजी के शैक्षिक चिन्तन का पूरा प्रभाव समग्र शिक्षा व्यवस्था पर दृष्टिगत होता है। शिक्षा का मूल उद्देश्य मनुष्य की शारीरिक क्षमता, मानसिक, भावात्मक, धार्मिक नैतिक, चारित्रिक, सामाजिक तथा व्यावसायिक विकास करना है। शिक्षा द्वारा मानव अपनी वैचारिक मुक्तता के साथ ही देश भक्ति से परिपूर्ण रहकर राष्ट्र के लिए समर्पित हो सके, वही सच्ची शिक्षा है जो मानव मन में आत्मविश्वास, आत्मश्रद्धा, आत्मत्याग, आत्मनियंत्रण, आत्म निर्भरता तथा आत्म ज्ञान जैसे विशिष्ट गुणों का प्रार्दुभाव कर सके। स्वामी जी ने शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहा है कि- "जिस शिक्षा से हम अपने जीवन का निर्माण कर सके, चरित्र गठन कर सके और विचारों का सामंजस्य कर सके वही शिक्षित कहलाने योग्य है। स्वामीजी के अनुसार शिक्षा बच्चे की आवश्यकता और स्वभाव के अनुसार होनी चाहिए। वे ऐसे बालकों का निर्माण चाहते थे जिनके चेहरे पर आभा, शरीर में बल, मन में प्रचण्ड इच्छा शक्ति, बुद्धि में पाण्डित्य, जीवन में स्वावलम्बन, हृदय में शिवा, प्रताप, ध्रुव तथा प्रह्लाद की जीवन गाथाएं अंकित हो और उन्हें देखकर महापुरुषों की स्मृतियाँ झंकृत हो उठे।

बालकों की शिक्षा के लिए शिक्षकों को अपने चरित्र और व्यक्तिगत जीवन को आदर्श रूप में प्रस्तुत करना होगा। स्वामीजी इसीलिए परोपकारी पुरुषों को शिक्षण व्यवसाय के लिए उपयुक्त मानते थे। उनके विचारानुसार शिक्षकों के शब्दों का प्रभाव शिष्यों पर तभी होगा जब शिक्षक मन और हृदय के पवित्र होगा। सच्चा गुरु उसे माना है जो बालकों को उनकी आँखों से देख सके, उनके कानों से सुन सके और उनके मन को समझ सके। ऐसा गुरु ही अपनी आत्मा

को शिष्यों की आत्मा में स्थानान्तरित कर सकता है। अनुशासन स्थापना के लिए उन्होंने दण्ड के स्थान पर आत्मानुशासन पर विशेष बल दिया। वे चाहते थे कि कि विद्यार्थी में नम्रता, विनयशीलता, आधारशुद्धता, सीखने की जिज्ञासा, संघर्ष की क्षमता, ज्ञान पिपासा, एकाग्रता तथा गुरु भक्ति आदि विशेषताओं की अनिवार्यता हो।

बालिका शिक्षा के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए स्वामीजी ने कहा है कि "स्त्री जाति की उन्नति के बिना भारत कभी भी विकास नहीं कर सकता। उस राष्ट्र के महान बनने की कोई आशा नहीं की जा सकती जहाँ नारी जाति का अपमान हो और वह अशिक्षा के बंधन से मुक्त न रह सके।" उनकी दृष्टि में निर्धनता, दरिद्रता जनशिक्षा की राह में सबसे बड़ी बाधा है। जन शिक्षा को महत्ता प्रदान करते हुए उन्होंने कहा है कि "जन शिक्षा द्वारा ही राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण किया जा सकता है। शिक्षा व्यक्ति को उसके समाज, देश और विश्व के साथ संबंधित कर मानवता की भावना का विकास करती है। विश्व के प्रति संवेदनशील वही हो सकता हैं जो राष्ट्रहित के लिए मन, वचन और कर्म से तत्पर हो वही सच्चा भारतीय कहलाने योग्य है।

स्वामीजी ने वर्तमान शिक्षा की न्यूनताओं का वर्णन करते हुए बताया कि "आज की शिक्षा की सबसे बड़ी खामी यह है कि इसके सामने अनुकरण करने के लिए कोई निश्चित लक्ष्य नहीं है। एक चित्रकार अथवा मूर्तिकार यह जानता है कि उसे क्या बनाना है तभी वह अपने कार्य में सफल हो पाता है। आज शिक्षक को यह स्पष्ट नहीं हैं कि वह किस लक्ष्य को लेकर अध्यापन कार्य कर रहा है। सभी प्रकार की शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण करना है। इसके लिए वेदान्त के दर्शन को ध्यान में रखते हुए मनुष्य निर्माण की शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।

आज की शिक्षा अच्छे डॉक्टर, इंजीनियर, प्रबंधन, प्रशासक तो तैयार कर रही है लेकिन वो इन्सान तैयार नहीं कर पा रही है जो संवेदनाओं से परिपूर्ण हो, जिसमें मानवता निवास करती हो, जो सृजनशील हो, जो समाज के पिछड़े वर्गों को ऊपर उठाने में परिपूर्ण हो। इसका नितान्त अभाव है। स्वामी जी ने विश्व शांति की परिकल्पना से अभीभूत होकर शिक्षा के क्षेत्र में विशेष परिवर्तन चाहते हुए कहा है कि हम बालक को एक ऐसे नागरिक के रूप में विकसित करना चाहते है जो विश्व के नागरिकों की तकलीफ, दुख-दर्द, अभाव, कष्ट, व्यथा, संताप का अनुभव कर सके। हमें ऐसा आदमी नहीं चाहिए जो मात्र अनुभव करे पर ऐसा आदमी चाहिए जो वस्तुओं और स्थितियों को परिपूर्ण बना सके। जो प्रकृति को पूरे मन से गहराई तक समझ सके उसमें खोज कर सके। हमें ऐसा मनुष्य चाहिए जो रुके नहीं पर निरन्तर कार्य करें और कार्यों को सही रूप में सम्पूर्णता तक पहुँचा सके।

स्वामीजी ने युवा पीढ़ी को सन्देश दिया है कि तुम जीवन का एक ध्येय बना लो, उस पर मनन करो, उसके सपने देखो, शरीर का प्रत्येक अंग उस लक्ष्य से आप्लावित हो, अन्य सभी विचारों को छोड़ो, कठिन परिश्रम करो, अगर तुम जिओ या मरो कोई गम नहीं बिना परिणाम सोचे अपने ध्येय की पूर्ति में लगे रहो तो मात्र छः माह में लक्ष्य की सिद्धी निश्चित होगी। स्वामीजी का विचार था कि रोगी चिकित्सक के पास जाने को तैयार नहीं हो तो चिकित्सक ही रोगी के पास क्यों न जाए?यदि गरीब लोग शिक्षा के निकट नहीं आ सकते तो शिक्षा को ही उनके लिए खेतों पर, उनकी फैक्ट्री या सर्वत्र जाना होगा।

स्वामी विवेकानन्द का शैक्षिक चिन्तन बड़ा व्यापक था। उन्होंने धर्म की शिक्षा, नारी शिक्षा तथा जन शिक्षा पर विशेष बल दिया है। वे जीवनोन्मुखी और विचारोत्तेजक शिक्षा के पक्षधर रहे हैं। वे भारतीय समाज के सुधार हेतु शिक्षा में कला, विज्ञान, साहित्य और संस्कृति ज्ञान के पोषक रहे हैं। वे शिक्षा द्वारा सामाजिक परिवर्तन से ऐसा भारत चाहते थे जो परम्परागत अंधविश्वास, पाखण्ड, अकर्मण्यता, जड़ता और आधुनिक सनक तथा कमजोरियों से स्वतंत्र रहकर आगे बढ़े। स्वामीजी शिक्षा द्वारा लौकिक और पारलौकिक दोनों को जीवन के लिए तैयार करना चाहते थे। कार्य के प्रत्येक क्षेत्र में व्यावहारिक बनने की उनकी सीख रही है।

स्वामीजी के शिक्षा दर्शन के आधारभूत सिद्धांतों के अनुसार शिक्षा ऐसी हो जिससे बालक का शारीरिक, मानसिक व आत्मिक विकास हो सके। बालक के चरित्र का विकास हो, उसका मन विकसित हो, बुद्धि बढ़े और आत्मनिर्भरता की दिशा में उन्मुख हो सके। बालक व बालिकाओं की समान शिक्षा व्यवस्था हो। धार्मिक व नैतिक शिक्षा पुस्तकों के स्थान पर आचरण व संस्कारों से दी जानी चाहिए। लौकिक व पारलौकिक ज्ञान की शिक्षा ग्रहण कर सके। गुरु शिष्य का निकटतम सात्विक संबंध हो तथा शिक्षा जन शिक्षा के रूप में सर्वसाधारण को शिक्षित कर सके। उन्होंने देश को विकसित करने के लिए तकनीकी शिक्षा को महत्त्व दिया। परिवार बालक की प्रथम पाठशाला है, अतः शिक्षा यही से प्रारम्भ हो इसके लिए परिवार संस्कारवान पाठशाला के रूप में प्रस्तुत हो सके।

इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द ने भारत राष्ट्र को सर्व शिक्षा से जागृत करते हुए विश्व बंधुत्व व वसुधैव कुटुम्बकम की भावना को प्रगाढ़ता प्रदान की। उनका शैक्षिक चिन्तन ही इस दिशा में सर्वोपरि रहा तथा विश्व स्तर पर भारतीय संस्कृति को प्रचारित करते हुए उसे अपने शैक्षिक चिन्तन से लाभान्वित किया।

सुरेन्द्र माहेश्वरी, प्रधानाचार्य
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, टहुँका
जिला-भीलवाड़ा (राजस्थान)

भाषाई संगम का सुनहरा सपना

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने 23 मई 1954 को गुजरात-सौराष्ट्र-कच्छ-प्रांतीय राष्ट्रभाषा प्रचार सम्मेलन के भावनगर में आयोजित सत्र में अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था कि 'वेद, उपनिषद्, रामायण और महाभारत- ये ही वे घाट हैं जहां पर हमारी सारी भाषाएं पानी पी हैं। भाषा मूक भी होती है। भाषा संकेत को भी कहते हैं और भाषा के इन रूपों को सभी लोग एक समान समझ भी लेते हैं। अतएव मुख्य वस्तु भाषा नहीं भाव है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने कहा- "भाव अनूठो चाहिए, भाषा कोऊ होय"। सो भाव की एकता को ही लेकर ये सारा देश एक रहा है और विभिन्न भाषाओं के भीतर से हम विभिन्न भावों की इसी एकता की अनुभूति करते हैं। भारत की भारती एक है। उसकी वीणा में जितने भी तार हैं उनसे एक ही गान मुखरित होता है। असल में ज्ञान की गाय हमारी हमारी एक ही है, ये सारी भाषाएं उसके अलग-अलग थन हैं जिनसे मुंह लगाकर भारत की समस्त जनता एक ही क्षीर का पान कर रही है। भारत की संस्कृति एक है, विभिन्न भाषाएं उसी संस्कृति से प्रेरणा लेकर अपने-अपने क्षेत्र में साहित्य रचती हैं और इन सभी साहित्यों से, अन्ततः उसी संस्कृति की सेवा होती है, उसी संस्कृति का रूप निखरता है जो सभी भारतवासियों का सम्मिलित उत्तराधिकार है।' दिनकर के इस कथन से भारतीय भाषाओं के बीच के प्रगाढ़ संबंधों का पता चलता है। लेकिन आजादी के बाद भारतीय भाषाओं के बीच द्वेष बढ़ाने का काम लगातार किया जाता रहा। हिन्दी के खिलाफ अन्य भारतीय भाषाओं को खड़ा किया गया। भारतीय भाषाओं पर अंग्रेजी को तरजीह दी जाती रही। अब भी दी जा रही है। माहौल कुछ ऐसा बना कि हिन्दी समेत अन्य भारतीय भाषाओं में शोध को हेय दृष्टि से देखा गया। अंग्रेजी में शोध की बाध्यता से हिन्दी समेत भारतीय भाषाओं में मौलिक चिंतन बाधित हुआ। आजादी के सत्तर साल बाद भी अब तक भारतीय भाषाओं को अकादमिक तौर पर साथ लेकर चलने की ठोस कवायद नहीं हुई। अलग अलग भारतीय भाषाओं को लेकर विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई लेकिन एक ऐसे परिसर की कल्पना नहीं की गई जिसमें संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल बाइस भाषाएं एक ही परिसर में पल्लवित हों। आंध्र प्रदेश के चित्तूर जिले में द्रविड़ भाषाओं

अनन्त विजय

को प्रोत्साहन देते हुए, उसमें पढ़ाई, शोध और सामंजस्य हेतु द्रविडियन यूनिवर्सिटी की 1997 में स्थापना की गई। इस विश्वविद्यालय को आंध्र प्रदेश सरकार ने तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक सरकार के सहयोग से स्थापित किया जहां तमिल, तेलुगु, मलयाली और कन्नड की पढ़ाई होती है। इसी तरह हिन्दी और उर्दू को लेकर अलग अलग विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। अन्य भाषाओं के नाम पर भी संस्थान होंगे। मैसूर में भारतीय भाषा संस्थान हैं लेकिन वहां अलग तरह का कार्य होता है। वहां भी निदेशक की नियुक्ति में लंबा अंतराल होने की वजह से, संस्थान में प्रोफेसर के पद पर नियुक्तियां नहीं होने से काम बहुत धीमी गति से हो रहा है। इस देश की संसद ने 'द इंगलिश एंड फॉरेन लैंग्वेजेज यूनिवर्सिटी' के नाम से केंद्रीय विश्वविद्यालय बनाया लेकिन कभी हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के नाम पर विश्वविद्यालय की स्थापना के बारे में विचार नहीं किया गया। इस ओर किसी का ध्यान नहीं गया या जानबूझकर भारतीय भाषाओं को नजरअंदाज किया गया, इस पर भी विचार करने की जरूरत है।

केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा के निदेशक प्रोफेसर नंदकिशोर पांडे ने इस बावत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को 28 मई 2018 को एक प्रस्ताव भेजा है। उन्होंने हिन्दी तथा भारतीय भाषा विश्वविद्यालय की स्थापना का सुझाव दिया है। उनका भी तर्क है कि' विदेशी भाषाओं के अध्ययन अध्यापन के लिए यह कार्य भारत सरकार ने बहुत पहले कर दिया था। लेकिन ऐसा भारतीय भाषाओं के संरक्षण और विकास के लिए नहीं किया गया। इस विश्वविद्यालय की एक बड़ी भूमिका प्रत्येक भाषा भाषी क्षेत्र में बिखरी हुई वाचिक परंपरा की सामग्री के संग्रह और लिपिबद्ध करने की होगी। जो कुछ भी संगृहीत हुआ है उसका सघन सर्वेक्षण तथा भाषिक और व्याकरणिक अध्ययन उसमें छिपे हुए भारतीयता के तत्वों के साथ ही ज्ञान-विज्ञान की वाचिक परंपरा का अन्वेषण करेगा। इस ज्ञान परंपरा

को शीघ्र नई तकनीक से जोड़कर संरक्षित करना आवश्यक हो गया है। विलंब होते ही आधुनिकता के प्रहार से यह सब कुछ क्षत विक्षत होनेवाला है। तब एक बड़ी लोक सांस्कृतिक संपदा से यह देश वंचित हो जाएगा।' प्रोफेसर पांडे का यह सुझाव अत्यंत महत्वपूर्ण है और इसपर त्वरित गति से विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को कार्यवाही करके मंत्रालय को भेजना चाहिए। नंद किशोर पांडे के सुझाव को दो महीने हो गए, उनके इस प्रस्ताव के समर्थन में भी कई भाषाविदों ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को पत्र लिखा है। अगर भारत सरकार का मानव संसाधन मंत्रालय अपनी भाषा और संस्कृति को लेकर गंभीर है तो इस प्रस्ताव के मिलते ही संसद के आगामी सत्र में बिल बनाकर पेश कर पारित कराया जाना चाहिए।

अगर यह विश्वविद्यालय बन जाता है तो यह राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने और मजबूत करने में भी महती योगदान दे सकता है। कल्पना कीजिए कि एक ही परिसर में सभी भाषा के विद्वान और छात्र अध्ययन करते हों, एक दूसरे बीच विचारों का आदान-प्रदान करते हों, एक दूसरे की समस्याओं पर, भाषाई प्रवृत्तियों पर विचार विमर्श होगा। भाषाओं के बीच गलतफहमियां दूर होंगी। जब भाषाई आवाजाही शुरू होगी को संवाद भी बढ़ेगा और जब संवाद बढ़ता है तो कई तरह की समस्याएं तो बगैर किसी प्रयास के हल हो जाती हैं, भ्रांतियां भी दूर हो जाती हैं। हिन्दी को लेकर जिस तरह का भय का वातावरण अन्य भारतीय भाषाओं में पैदा किया जा रहा है वह भी दूर होगा।

प्रोफेसर पांडे ने अपने प्रस्ताव में कहा है कि इस विश्वविद्यालय में बाइस मान्य भाषाओं के अलाव जितनी भी उपभाषाएं या बोलियां हैं उनके भी मानक व्याकरण और इतिहास लेखन पर काम किया जाएगा। इसके अलावा उन्होंने उन प्राचीन भारतीय भाषाओं को भी रेखांकित किया है जिनमें प्रचुर मात्रा में साहित्य उपलब्ध है लेकिन वो अब प्रचलन में नहीं है। उनके सामने खत्म हो जाने का खतरा मंडरा रहा है। इसके अलावा इस विश्वविद्यालय के स्थापित होने से एक और काम हो सकता है जिसकी ओर भी प्रस्ताव में ध्यान आकृष्ट किया गया है वो यह कि भारतीय साहित्य का एक अनुशासन बने ताकि वैश्विक साहित्यक परिदृश्य में हमारी उत्कृष्ट रचनाओं को प्रचारित किया जा सके। इसका लाभ यह होगा कि नोबेल पुरस्कार जैसी प्रतिष्ठित पुरस्कारों में भारतीय भाषाओं की भागीदारी बढ़ेगी।

इस विश्वविद्यालय के स्थापित होने का एक लाभ यह भी होगा कि इससे भारत में मौलिक चिंतन की अवरुद्ध हुई धारा का विकास संभव हो सकेगा। आयातित विचारधारा और आयातित भाषा ने हमारी ज्ञान परंपरा का नुकसान किया, उस नुकसान की भारपाई के लिए भी इस बात की आवश्यकता है कि सभी भारतीय भाषाएं कंधे से कंधा मिलाकर चलें। जॉर्ज ग्रियर्सन ने अपनी मशहूर किताब लिंगविस्टक सर्वे में लिखा है कि 'जिन बोलियों से हिन्दी की उत्तपत्ति हुई है उनमें ऐसी विलक्षण शक्ति है वे किसी भी विचार को पूरी सफाई के साथ अभिव्यक्त कर सकती है। हिन्दी के पास देसी शब्दों का अपार भंडार है और सूक्ष्म से सूक्ष्म विचारों को सम्यक रूप से अभिव्यक्त करने के उसके साधन भी अपार हैं। हिन्दी का शब्द भंडार इतना विशाल और उसकी अभिव्यंजना शक्ति ऐसी है जो अंग्रेजी से,शायद ही, हीन कही जा सके।' लेकिन आज ऐसी स्थिति है कि हम हिन्दी को विपन्न मानने लगे हैं, अपनी अज्ञानता में हिन्दी में शब्दों की कमी का रोना रोते हैं और अंग्रेजी के शब्दों का धड़ल्ले से प्रयोग करने लगे हैं। अगर हिन्दी में कोई शब्द नहीं है या अन्य भारतीय भाषा में कोई शब्द नहीं है तो बजाए अंग्रेजी की देहरी पर जाने के हम अपनी सहोदर भाषाओं के पास जाएं और उनके शब्द का इस्तेमाल शुरू करें। अगर भारतीय भाषाओं के विश्वविद्यालय का स्वप्न मूर्त रूप ले पाता है तो यह कार्य भी संभव हो पाएगा। भारतीय भाषाओं के शब्द एक दूसरे की भाषा में प्रयुक्त होकर अपनी अपनी भाषा को समृद्ध करेंगे। महात्मा गांधी ने भारतीय भाषाओं को लेकर विस्तार से लिखा है जो संपूर्ण गांधी वांग्मय के खंड 13 और 14 में संकलित है। भारत सरकार अभी गांधी जी के डेढ सौवीं जन्मदिवस को समारोह पूर्व मनाने की योना पर काम कर ही है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी खुद गांधी जी की डेढसौवीं जन्म जयंती समारोह में व्यक्तिगत रुचि ले रहे हैं। इस मौके पर अगर भारतीय भाषाओं के साहचर्य के उपरोक्त प्रस्ताव को मंजूरी मिलती है तो गांधी का भारतीय भाषाओं के माध्यम से देश की एकता की मजबूती का स्वप्न पूरा होगा।

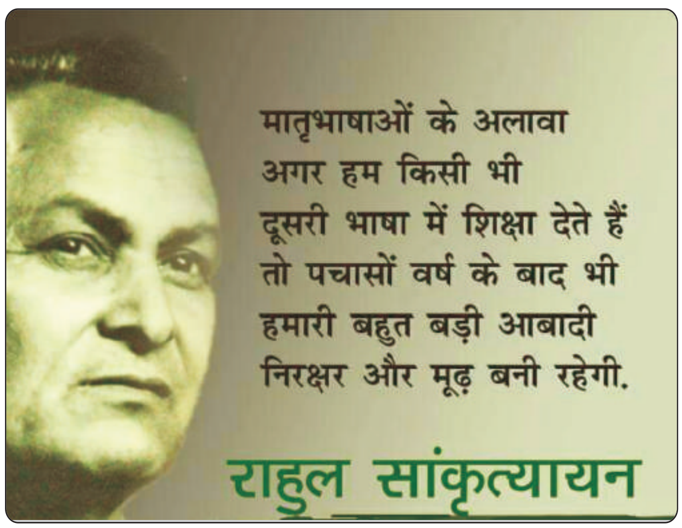

हिन्दी से कटना, अपनी जड़ों से कटना

सबसे बड़े प्रजातंत्र की भाषा..हिन्दी...क्या यह कम है अपनी भाषा पर गर्व करने के लिए..! अच्छा तो फिर इस बात पर सिर शान से ऊँचा कर सकते हैं कि ज्यादतर भाषाएँ हिन्दी की तरह संस्कृत से निकली हैं। भारोपीय परिवार की भाषाएँ यानि भारत के साथ यूरोप की भी....। सबसे पहले भाषा ज्ञान भारत में ही विकसित हुआ। हम लौकिक संस्कृत को कैसे भूल सकते हैं? जर्मन जो आज भी हमारे वेदों पर निरंतर शोध कर रहा है, हमारी संस्कृत का लोहा मानता है। इसीलिए नासा ने अंतरिक्ष विज्ञान के सर्वाधिक उपयुक्त भाषा माना है और अपने शोधकर्ताओं व विद्यार्थियों को संस्कृत के अध्ययन का निर्देश दिया है। अंग्रेजी, लैटिन, जर्मन, स्पेनिश, नेपाली आदि बहुत सी भाषाओं का हमारी लौकिक संस्कृत से अटूट नाता है। कैसे? आइए, देखें कुछ उदाहरण: अंब्रेला जो कि अंग्रेजी का शब्द आपने सुना होगा मगर वास्तव में संस्कृत का है। वैदिक लौकिक साहित्य से पता चलता है कि हमारे यहाँ अंब्रेला एक पेड़ होता है जिसका आकार छाते की तरह होता है सो वह नाम छाते के लिए पड़ा। ऐसे ही श्नियरेश शब्द को देखें जिसका प्रयोग तुलसीदास जी ने रामचरित मानस में चौपाई में किया है और कबीर ने दोहे में भी- 'निंदक नियरे राखिए...आँगन कुटि छवाय।' अंग्रेजी में नियर बन गया और दोनों में 'समीप' अर्थ ही होता है, यह भी वैदिक लौकिक संस्कृत का शब्द है। इसी प्रकार थ्री-त्रि, अष्ट-ऐट आदि अंकों को समझ सकते हैं। मातृ शब्द मदर बन गया जो लैटिन में मातेर है। फादर, ब्रादर, सिस्टर आदि शब्द यहीं से गए हैं। सूखा (हिन्दी) शुष्क (संस्कृत) खुश्क (फारसी)

मधु (हिन्दी, संस्कृत) मद (फारसी...

पति (हिन्दी, संस्कृत; अर्थ - मालिक) पैती (अवस्ती फारसी)पोतिस (यूनानी.......,अर्थ - मालिक)

रोजमर्रा की चीजों, सगे-सम्बन्धियों, सामान्य जानवरों, क्रियाओं के लिये काम आने वाले शब्द इस परिवार की सभी प्राचीन भाषाओं में एक दूसरे से बहुत मिलते-जुलते थे और इस आधार पर भाषाविदों ने आदिम-हिन्द-यूरोपीय भाषा की परिकल्पना की। इन विभिन्न भाषाओं के शब्दों के रूप इसलिए मिलते-जुलते थे क्योंकि यह एक ही प्राचीन जड़ से उत्पन्न हुए सजातीय शब्द (बवहदंजम) थे। नीचे तालिका में कुछ प्राचीन और नयी हिन्द-यूरोपीय भाषाओं की आम शब्दावली के कुछ शब्द और परिकल्पित आदिम-हिंद-यूरोपीय परिवार की पुनर्रचना दिए गए हैं।

डॉ. बीना राघव

इसे देखकर भाषा का अंत:सम्बन्ध और भाषा के विकास की प्रक्रिया सहज ही समझ आ जाती है।

हिन्दी संस्कृत लैटिन प्राचीन यूनानी आधुनिक जर्मन अंग्रेजी आदिम-हिन्द-यूरोपीय माँ

मातृ	मातेर	mater	mutter	मदर	मातेर	
	मैतैर	मुटर	mother	mater		
पिता	पितृ	पातेर	pater	vater	फादर	पतेर
		Pater	पातैर	फाटर	father	pater
भाई	भ्रातृ	फ्रातेर	फ्रातैर	ब्रूडर	ब्रदर	भ्रातेर
		Frater	phrater	bruder	brother	bhrater
बहिन	स्वसृ	सोरोर	एओर	श्वॅस्टर	सिस्टर	सुएसोर
		Soror	eor	schwester	sister	swesor
कुत्ता	श्वान	कानिस	क्युओन	हुण्ड	हाउण्ड	कुओन
		Canis	kyon	hund	hound	k'won
है	अस्ति	एस्त	एस्ति	इस्ट	इज	एस्ति
		Est	esti	ist	is	esti
भेड़	अवि	ओविस	ओइस	आउअ (भेड़ी)	ईउअ (भेड़ी)	ओउइ
		Ovis	ois	aue	ewe	owi
अश्व	अश्व	एक्वु-उस	हिप्पोस	एहवाज	एओह	एकुओ
		Equus	hippos	ehwaz	eoh	ek'wo
मन	मनस	मेन्स	मेनोस	मिन्न-अ	माइण्ड	मेन
		Mens	menos	minne	mind	men
मानव	मानव,	-	-	मन्न	मैन	मनु
	मनु			mann	man	manu
नाम	नामन	नोमेन	ओनोमा	नामे	नेम	नोम्न
		Nomen	onoma	name	name	nomn
तू,तुम	त्वम	तू tu	सू su	दू du	दाउ thou	तु tu
देवता	देव	देउस	-	जिउ ziu	-	देइवोस
		Deus				deiwos
गाय	गौ	बोस	बोउस	कू kuh	काउ	ग्वोउ
		bos	bous		cow	gwou

भाषा विज्ञान का विद्यार्थी जानता है कि किस प्रकार देशकाल, जलवायु परिवर्तन और मुखसुख के कारण एक शब्द दूसरी जगह जाकर रूप बदल लेता है तो भारोपीय परिवार की भाषाएँ भी सहोदरी कही जानी चाहिए और उनसे भी कोई बैर नहीं होना चाहिए। मगर सवाल यह है कि जब हम इतनी गौरवशाली वैभवपूर्ण ऐतिहासिक धरोहर के मालिक हैं तो अपनी जड़ों को सींचेंगे या जो दूसरे का हो गया, उसके मोह में पड़े पदाक्रांत होते रहेंगे...?

राजभाषा हिन्दी के उत्थान के पथ के कंटक हम सबको मिलकर साफ करने होगे। हमें समझना होगा कि संस्कृति की जड़ें जितनी गहरी होंगी, स्वाभिमान का वृक्ष भी उतना ही फलेगा-फूलेगा। देश को आजाद हुए सत्तर साल हो गए मगर आज भी हमारी हिन्दी को पूर्णत: 'राष्ट्रभाषा' का दर्जा नहीं मिला है जबकि विदेशी भाषा अंग्रेजी को पब्लिक विद्यालयों में प्रथम स्तर पर पढ़ाया जा रहा है। मात्र आठवीं तक हिन्दी अनिवार्य है। नौवीं में हिन्दी, संस्कृत, जर्मन, स्पेनिश या फरेंच में से द्वितीय भाषा के रूप में विद्यार्थी को एक भाषा का चुनाव करना होता है। यह हमारा दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है कि विश्व में सबसे समृद्ध देश भाषा के मामले में यदि कोई है तो तो वह भारत ही है। संविधान में भी २२ भाषाओं को मान्यता प्राप्त है फिर हम क्यों नहीं अब तक किसी एक अपनी भाषा को इस काबिल बना पाए कि वह प्रथम स्तर पर पढ़ाई जाए। हमारा शब्दकोश भी सभी भाषाओं से ज्यादा विस्तृत है। प्रतियोगी परीक्षाओं में भी हिन्दी को बढ़ावा मिलना चाहिए और नौकरियों में भी हिन्दी भाषी के साथ कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए।

व्यक्तित्व का सही मायनों में विकास तब हो पाता है जब व्यक्ति अपनी भाषा में चिंतन शैली विकसित कर पाता है। अत: प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा निजभाषा यानि मातृभाषा में ही दी जानी चाहिए। भारत में हिन्दी का कहीं भी विरोध अब देखने को नहीं मिलता चाहें आप मेघालय चले जाइए,चाहें तमिलनाडु जहाँ हिन्दी बोलते-सीखते लोग नजर आ जाएँगे। बल्कि कितने ही देशों में विश्वविद्यालयों में उच्च स्तरीय हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था है। जर्मनी में तो स्कूलों में हिन्दी व संस्कृत शिक्षण की विशेष व्यवस्था है। वे हमारे ज्ञान से लाभान्वित हो रहे हैं जबकि हम अपने संस्कारित ज्ञान से बच्चों को वंचित कर रहे हैं। हिन्दी-संस्कृत से दूर होते बच्चे कितने संस्कारवान बन रहे हैं...., यह समाज में किसी से छिपा नहीं है। गाँधी जी मूलत: गुजराती थे मगर देश की एकता के सन्दर्भ में एक सूत्र में जोड़ने वाली भाषा 'हिन्दी' को ही मानते थे। वे कहा करते थे कि 'हम तो अपनी भाषा में ही काम करेंगे, नहीं आती तो सीखना होगा।' सारा काम हम हिन्दी में कर सकते हैं, आवश्यकता केवल दृढ़तापूर्वक लागू करने की मानसिकता की है। छोटे से देश तुर्की ने आजादी पाते ही एक पत्र देशवासियों के नाम जारी कर रातों-रात अपनी पारंपरिक भाषा 'हिब्रू' को लागू कर दिया था यह कहकर जिसे इस भाषा से परहेज हो, वह यह देश छोड़कर जा सकता है। हिब्रू भाषा से उस देश के विकास पर कोई फर्क नहीं पड़ा बल्कि स्वतंत्र राष्ट्र की अपनी भाषा होने का गौरव ही प्राप्त किया। इस्राइल ने इसी भाषा में विमान उड़ाए और उद्योग-धंधे स्थापित किए। तथाकथित अंग्रेजी से तकनीकी विकास का मापदंड सधता तो जापान, फ्रांस और चीन जैसे विकसित देश निज भाषा छोड़ अंग्रेजी के पीछे भाग रहे होते..। भारत संघीय राष्ट्र होने के कारण भाषा के नाम पर देश छोड़ने के लिए तो नहीं कहा जा सकता लेकिन प्राथमिक स्तर पर और उच्च शिक्षा स्तर पर प्रथम स्थान पर अपनी भाषा में शिक्षण व्यवस्था अवश्य की जानी चाहिए और अंग्रेजी को द्वितीय स्तर पर रखा जाए, जो कि बहुत पहले ही हो जाना चाहिए था। कम से कम हिन्दी भाषी क्षेत्रों में तो अनिवार्य रूप से प्रथम स्तर पर बारहवीं कक्षा तक हिन्दी पढ़ाई जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए। राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता मिल जाएगी तो जो थोड़ा- बहुत विरोध है, वह भी समाप्त हो जाएगा। 'हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी' जैसी स्वयं सेवी हिन्दी संस्थाएँ आगे आएँ और भारतीय भाषाओं में समन्वय स्थापित करें। हिन्दी की जड़ों को सींचने वाले हिन्दी शिक्षकों, साहित्यकारों व आमजन को देश में बारहवीं तक पहले दर्जे पर हिन्दी को पढ़ाई जाने की मांग को उठाना चाहिए ताकि भविष्य में हिन्दी श्रोता, पाठक और चिंतक मिल सकें। आज घरों से हिन्दी गायब होती जा रही है कारण पब्लिक स्कूलों में प्राथमिक कक्षाओं की अध्यापिकाओं द्वारा माता-पिता पर यह दबाव डाला जाता है कि अपने बच्चे के साथ अंग्रेजी में ही बात करिए। यह अपनी संस्कृति का क्षय है, इसे तुरंत रोका जाना चाहिए। घरों में हिन्दी या स्थानीय मातृभाषामय ही माहौल हो। साथियो, समय की माँग है कि हिन्दी के लिए अब कुछ ठोस करें। कम से कम प्राथमिक कक्षाओं में और प्रथम स्तर पर बारहवीं तक हिन्दी को तो लागू करें। हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के अस्तित्व और अपनी संस्कृति को बचाने के लिए हम सभी संकल्पित हों।

-डॉ. बीना राघव
शिक्षाविद् एवं साहित्यकार
गुरुग्राम

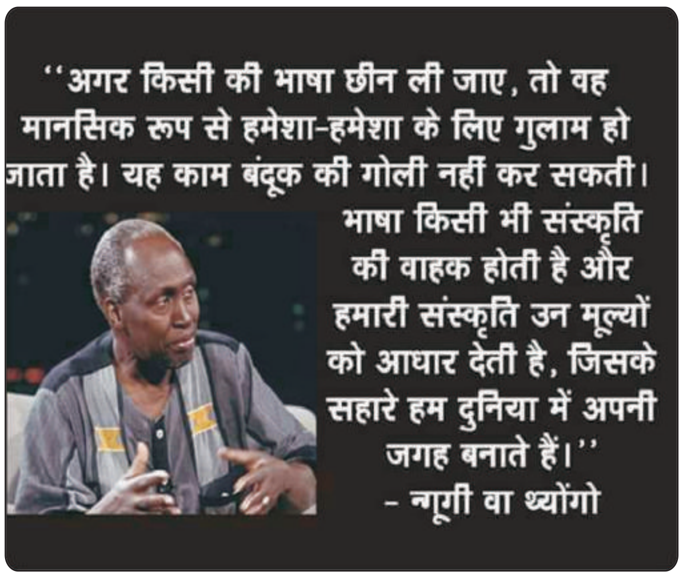

विविध भाषाओं के विकास और संचार प्रवाह में रेडियो नेपाल

डॉ. नवराज लम्साल

रेडियो नेपाल प्रसारण संस्था के अतिरिक्त भाषा सेवी संस्था भी है । यह गीत, संगीत, कला, साहित्य, संस्कृति और राष्ट्रीय पहचान के विविध कार्यक्रमों का प्रसारण कर विश्व भर फैले हुए नेपालियों को भाषिक एकता के सूत्र में बाँधते हुए आया है । रेडियो नेपाल 21 भाषाओं में समाचार और 18 भाषाओं में कार्यक्रमों का उत्पादन और प्रसारण करता है । सूचना, समाचार, शिक्षा, मनोरंजन और विविध शैलियों की प्रस्तुति के द्वारा सविंधान प्रदत्त सूचना के अधिकार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का सम्मान और सुरक्षा करते हुए आया है । बाल-बालिकाओं, महिलाओं, वरिष्ठ नागरिक, अपंग व्यक्ति / समुदाय, दलित तथा समाज के विविध पक्ष, स्तर और पहचान के संरक्षण, संवर्धन और प्रचार-प्रसार में भी इसने महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह की है । नेपाल अपने आप में बहु जातीय और बहु भाषीय देश है । उन भाषाओं और संस्कृतियों के संरक्षण और विकास की खातिर भी रेडियो नेपाल ने बहु भाषिक नीति का अवलंबन किया है । 21 भाषाओं में समाचार और नेपाली के अलावा अन्य 18 भाषाओं में कार्यक्रमों का प्रसारण होता है । वह भाषाएँ और कार्यक्रम इस प्रकार हैं ।

भाषा	**कार्यक्रम का नाम**
राई वान्तवा	आम्नो लेमासी
लिम्बू	नुनामफुंग
पूर्वी थारू	सूरजमुखी
मैथिली	हमर मित चहटकर गीत और अप्पन मिथिला
भोजपुरी	भोजपुरिया संदेश
उर्दू	गुलशन-ए-नेपाल
तामांग	स्यालगार
शेर्पा	स्यार्वी डोलुगकी ल्यारिम
हिन्दी	मधुरिमा
नेवारी	जीवन दबु
गुरूंग	न्योई कुई न्योई छ्या
मगर	कानुंग ढूट कानुंग ह्रोस
पश्चिमी थारू	हमार पहुरा
अवधि	दुवारे मुवारे
खाम मगर	गेगेमी कुइख्यांग
डोटेली	हजारी माला
राना थारू	लखबरी

उपर्युक्त कार्यक्रमों में सम्बंधित भाषा के विज्ञों, विद्वानों, सरोकार वालों से बातचीत, सम्बंधित भाषा के गीत और उन्हीं भाषा और भाषिक मौलिकता से जुड़े हुए त्यौहार, दिवस एवं उत्सव के विषयों की सूचना, समाचार, महत्व और औचित्य के बारे में विशेष वार्ता एवं रिपोर्टिंग की जाती है । इसके अलावा नेपाली भाषा में सौ से भी अधिक शीर्षकों के कार्यक्रम हैं । हाल मगही, संस्कृत और अंग्रेजी भाषा में कार्यक्रम नहीं हैं । अंग्रेजी भाषा का कार्यक्रम बहुत सालों तक संचालन में रहा । बीच में रुकी हुई वह श्रृंखलाएँ अब फिर से शुरू की जायेंगी ।

कार्यक्षेत्र और दायित्व

- दैनिक उद्घोषण
- कार्यक्रम उत्पादन/प्रसारण
- समसामयिक/पर्व/दिवस/राष्ट्रीय महत्व और आवश्यकता विशेष कार्यक्रम उत्पादन
- कला/साहित्य/धर्म/संस्कृति/भाषा/जनजीवन/इतिहास/समाज और अन्य विषयों का प्रवर्द्धन
- लोक कल्याण/सामाजिक न्याय और सीमांतकृत व्यक्ति या क्षेत्र के स्वर संबोधन
- स्वास्थ्य/शिक्षा/सार्वजनिक संपत्ति/सामाजिक सदभाव/सहिष्णुता और राष्ट्रीय एकता वृद्धि
- राष्ट्रीय आवश्यकता/आत्म सम्मान/आत्म बोध और जागरण के सामग्रियों सहित उत्पादन
- ज्ञान/विज्ञान/वातावरण/पर्यावरण/आधुनिक प्रविधियों के बारे में जानकारी
- गीत/संगीत/नाटक आदि के माध्यमों से स्वस्थ मनोरंजन और उक्त विधा का उन्नयन
- राष्ट्रीय दिवस/महत्व/घटनाओं आदि का प्रत्यक्ष प्रसारण और गीत-संगीत आदि सम्मलेन/प्रतियोगिताएँ
- मासिक रूप में अतिरिक्त प्रसारण
- राष्ट्रीय दायित्व अंतर्गत के राष्ट्रीय पर्व/दिवस/उत्सव के विशेष कार्यक्रम
- राजनैतिक संदर्भ, नेतृत्व तथा राष्ट्रीय विभूतियों के स्मरण में विशेष कार्यक्रम
- सरकारी संघ-संस्थाओं और संवैधानिक आयोग विशेष के कार्यक्रम

■ विशेष अवसर/दायित्व के, राष्ट्रीय पर्व/दिवस/उत्सव के विशेष कार्यक्रमों का प्रत्यक्ष प्रसारण

■ प्राकृतिक विपदाओं, घटनाओं, दुर्घटनाओं और आपातकालीन स्थितियों में विशेष सामग्रियों का संयोजन, उत्पादन और प्रत्यक्ष प्रसारण

■ संसद भवन, राष्ट्रपति भवन, सैनिक मंच टुंडीखेल लगायत देश के विभिन्न भूभागों से आवश्यकतानुसार प्रत्यक्ष प्रसारण

■ विभिन्न मठ-मंदिर, देवालय, ऐतिहासिक, पौराणिक तथा धार्मिक स्थलों से आवश्यकतानुसार कार्यक्रम उत्पादन और प्रत्यक्ष प्रसारण

■ केन्द्रीय/प्रदेश स्तरीय बाल गीत, लोक गीत, आधुनिक संगीत, जागरण गीत और अन्य विभिन्न प्रतियोगिताओं तथा सम्मेलनों का संचालन

■ स्थानीय व्यक्ति/प्रवृत्ति/पात्र/घटनाओं को संबोधित होने वाले नए विषय और संदर्भ सामग्रियों का संकलन और प्रसारण

■ रेडियो नेपाल के भंडार में संग्रहित पुराने गीत, संगीत और दुर्लभ आवाजों के संरक्षण के लिए आर्काइविंग की व्यवस्था और उन सामग्रियों का संरक्षण और प्रसारण

■ नाट्यकर्मियों, साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के साथ सहकार्य

■ प्रदेश स्तर पर ही पहुंचकर विभिन्न संगीत प्रतियोगिताओं का आयोजन

विगत और हाल की प्रसारण स्थिति :

सन 1950 में स्थापित रेडियो नेपाल प्रसारण के विविध आरोह-अवरोह को पार करते हुए यहाँ तक आ पहुंचा है । रेडियो नेपाल ने सन 1993 में क्षेत्रीय प्रसारण, 1995 में एफ.एम. प्रविधि की शुरूआत, 19 फरवरी, 2003 से ऑनलाइन प्रसारण और 17 अगस्त, 2016 से चौबीस घंटे का प्रसारण करते हुए 23 अगस्त, 2017 से प्रादेशिक प्रसारण के अभ्यास में है । प्रादेशिक प्रसारण की समयावधि बढ़ाकर नए ढंग से प्रसारण को चुस्त, व्यवस्थित और समयानुकूल बनाने की योजना, अभ्यास और सक्रियता जारी है । रेडियो नेपाल का हर निर्णय किसी न किसी रूप में राष्ट्रीय महत्व से जुड़ा होता है और राष्ट्रीय आवश्यकताओं को पूरा करने की सामर्थ्य रखता है । छह जगहों में स्थित मिडियम वेब के 576, 648, 684, 792, 810 और 1143 किलो हर्ज के विभिन्न स्टेशनों के साथ एफ. एम बैंड के 98,100 और 103 मेगा हर्ज में हम 21 जगहों से प्रसारण करते हैं । ऑनलाइन www-radionepal-gov-np के माध्यम से संसार भर पहुँचते हैं । संसार भर फैले हुए सभी नेपालियों को एकता के सूत्र में बाँधने की पुरजोर कोशिश करते हैं । कार्यक्रम उत्पादन की नयी शैली और संरचना एक चीज है तो भाषा दूसरी चीज है । इन सबसे भी ऊपर विषय है और विषय किसी न किसी रूप में इस मिट्टी को छूकर खड़ी होती है । हम कहते हैं- आवाज से सम्पूर्ण नेपाल को छूने वाला रेडियो नेपाल ।

प्रादेशिक प्रसारण: रेडियो नेपाल ने 1993 से तत्कालीन पाँच विकास क्षेत्रों से क्षेत्रीय प्रसारण शुरू किया था । देश संघीय शाशन प्रणाली में जाने के बाद क्षेत्रीय प्रसारण को प्रादेशिक प्रसारण के रूप में विकसित कर काठमांडू के केन्द्रीय प्रसारण के अतिरिक्त देश के सातों प्रदेश से संबंधित स्थान की आवश्यकता और औचित्य अनुरूप अलग-अलग कार्यक्रमों का प्रसारण करता आ रहा है । इसे और व्यवस्थित और चुस्त बनाने के लिए बर्दिवास और दांग में नए स्टूडियो का निर्माण कार्य तीव्र रूप से आगे बढ़ रहा है । इसके अलावा प्रसारण में अन्य भाषाओं के विस्तार की योजना भी है । प्रादेशिक स्तर पर संबंधित प्रदेश के बहुसंख्यक जनता की भाषा में विविध कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाता है । आवश्यकतानुसार उन कार्यक्रमों को केन्द्रीय प्रसारण से भी प्रसारण किया जाता है ।

कार्यक्रम उत्पादन और सहकार्य : कल के सफर को तय करने के लिए आज हम कहाँ है ? कैसे खड़े हैं, यह पता होना जरूरी है । हम केवल हम ही नहीं हैं, पूरे देश और देश को मजबूत बनाने के लिए सक्रिय संघ/संस्था/संगठन/निकाय के साथ सहकार्य और सहयात्रा भी हमारे होने का हम है । हमारी सफलता के साथ देश की सफलता जुड़ी होती है और असफलता हमारी कमजोरी है । पूरी व्यवस्थापन के अतिरिक्त कार्यक्रम महाशाखा प्रसारण की मेरूदंड है । सभी कार्यक्रम और उसकी प्रसारण तालिका निर्माण तथा प्रसारण को अनुगमन करते हुए और ठीक करते हुए तथा नए प्रारूपों का निर्माण करते हुए आगे बढ़ना है । जिस जमीन पर खड़े हैं वो जमीन कैसी है? उसे अनदेखा करके दूसरी उचाई को लांघ नहीं सकते । उन प्रयोजन के लिए कार्यक्रम उत्पादन के तीन द्वार हैं हमारे । जैसे :

■ रेडियो नेपाल के अपने निजी उत्पादन

■ प्रायोजन सहित के उत्पादन

■ संबंधित प्रायोजक के ही जनशक्ति द्वारा उत्पादन

रेडियो नेपाल के नियमित कार्यक्रम :

बाल-बालिकाओं के लिए बाल वाटिका, युवाओं के लिए युवा संचार, वरिष्ठ नागरिकों के लिए वरिष्ठ नागरिक, रोजगार प्रवर्द्धन के लिए स्वरोजगार, विकास पर बहस के लिए विकास विमर्श, उपभोक्ता अधिकार के लिए हमारी जिज्ञासा, कला साहित्य के लिए मधुवन, उद्गार और गजल गंगा, महिला सशक्तीकरण के लिए आज की नारी, संगीत प्रतिभा के लिए साज और आवाज, पर्यटन प्रवर्द्धन के लिए

दूर–सुदूर, समसामयिक विषय केन्द्रित बहस के लिए समाज , प्रतिष्ठित व्यक्तित्व के जीवन कथा में आधारित संवाद जीवन यात्रा, जन सरोकार के सवालों के जवाब की खोज जन सरोकार, जन स्वास्थ्य पर जिज्ञासा हमारा स्वास्थ्य, हेल्थ टिट्स विट्स, विज्ञान और वैज्ञानिक संदर्भ ज्ञान–विज्ञान, जीवन की सकारात्मकता की खोज जीवन सुख, लेखकों के साथ संवाद सर्जक और सृजना, गीतों की कहानी, स्वर संवाद, ठेट नेपाली लोक गीतों के लिए रोदी, नए–नए सृजनाओं के लिए नव सृजन, शैक्षिक मुद्दों की सामूहिक बहस शैक्षिक बहस, स्वदेश के गौरव और गौरव गाथा पर मेची काली, सांस्कृतिक बहुलता को संबोधन संस्कृति और परंपरा, जातीय सद्भाव और मानव मर्यादा के लिए समता, खेल और खिलाड़ियों की बात खेल संसार, शनिवारीय आकर्षण नाटक, समसामयिक राजनैतिक संवाद अंतर संवाद, घटना और घटना के ऊपर विचार–विश्लेषण घटना और विचार ! देश के लिए उल्लेखनीय योगदान देने वाले विशिष्ट व्यक्तियों की जीवन कथा पीछे मुड़कर देखते हुए, समाज और पत्रकारिता के बीच के संबंध संचार और समाज ! इन समग्र विषयों और संदर्भों को समेटना रेडियो नेपाल के कुछ प्रयास हैं । लोक गीत, दोहोरी गीत, आधुनिक गीत, पुराने गीत, चलचित्रों के गीत, बाल गीत, स्वदेश गान, वातावरण विशेष गीत, सामाजिक सद्भाव झलकने वाले गीत, वरिष्ठ नागरिक विशेष गीत, राष्ट्र भाषा के गीत, गजल, त्यौहार विशेष के गीत और भजन नियमित प्रसारण में हैं । यह सभी गीत मनोरंजन के माध्यम भी हैं और राष्ट्रीय संगीत सम्पदा का संरक्षण भी हैं ।

सूचना सहित मनोरंजन और स्रोताओं के साथ प्रत्यक्ष संवाद पर आधारित विभिन्न कार्यक्रम प्रसारण में हैं । विज्ञों–विद्वानों के साथ बातचीत, कुछ रोचक तथ्यों पर आधारित, कुछ हास्य प्रधान–मनोरंजन, कुछ संगीतिक सहकार्य, कुछ टेलीफोन संवाद और कुछ प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष स्रोताओं की सहभागिता ! यह सभी कार्यक्रम के आधार और स्रोत हैं । गीत–संगीत, मनोरंजन और सूचनाओं को दृष्टिगत कर संचालित कुछ कार्यक्रम इस प्रकार हैं- शुभेच्छा, अभिमत, सप्तरंग, जाने क्या बात है, फैन बॉक्स, एस.एम.एस., आपकी बॉलीवुड, म्यूजिक और मस्ती, क्या तुम मेरे दोस्त बनोगे? संगीतांजली, पुरानी यादें, समय संगीत, यादें और संदेश, संगीत सरोवर, बिम्ब–प्रतिबिम्ब, गीतिकथा, विश्व परिवेश, तरेली, मधुर गुंजन, परिदर्शन, लोक लहरी, हिन्दी गीतमाला आदि ।

और, अंत में, रेडियो नेपाल प्रसारण के हिसाब से सिर्फ राष्ट्रीय रेडियो ही नहीं है दायित्व और जिम्मेवारी बोध के हिसाब से भी नेपाल की राष्ट्रीय धरोहर है । उत्तेजना नहीं, उत्सुकता और आवश्यकता बोध हमारी सीमाएं हैं । सूचना और संदेश, सकारात्मकता और संतुलन हमारा मूल मंत्र है । हाथ धोने की बातें, बेटियों को विद्यालयों में भेजने की बातें, साफ पानी पीने और जन स्वास्थ्य की बातें, राष्ट्रीय गौरव और नेपाली होने का महत्व, नए युग की नयी प्रविधि, विचारों की बहुलता, सांस्कृतिक और जातीय विविधता तथा लोकतंत्र के मूल मर्म, राज्य के नीति–नियम और कानून का पूर्ण पालन जैसे संदर्भ हमारे मूल मार्ग हैं । हम इसी मार्ग में निरंतर यात्रारत हैं ।

डॉ. लम्साल

रेडियो नेपाल कार्यक्रम महाशाखा के प्रमुख हैं ।
कर्ण और धरा जैसे महाकाव्य के रचयिता होने के साथ
चर्चित नेपाली कवि एवं गीतकार भी हैं ।

पृष्ठ संख्या 29 का शेष

जन–जन तक पहुंचाने का बीड़ा उठाया । उनकी कविता 'सही बाटो'(सही रास्ता) की दो पंक्ति यहाँ प्रस्तुत है –

संकीर्णताको पर्खाल नाघी
यथार्थ वैज्ञानिक पंथ लागी

इस पंक्ति के माध्यम से कवि ने उन शोषित लोगों को संबोधित किया है जो अभी भी संकीर्णता की दीवार लांघने में असमर्थ हैं । कवि कहते हैं वास्तविक वैज्ञानिक पथ पर चलो अर्थात अब सच्चाई को पहचानो । इसी तरह "पर्दा छिट्टै खोलिदेऊ" (पर्दा जल्दी खोलो) कविता में भी उन्होंने प्रबल क्रांतिकारी स्वर गुंजित किया है ।

हे ! संकीर्ण विचारले हृदयमा जालो बुनेका जन
सक्दैनौ अब यो विशाल दुनियादेखि त्यसै उम्कन

इस पंक्ति के माध्यम से कवि मिश्र जी ने उन लोगों को संबोधित किया है जो अपने हृदय में संकीर्णता भरे विचारों का जेएएएल बुनते रहते हैं । कवि कहते हैं अब ऐसे विचारों वाले लोग इस दुनिया से मुक्त नहीं हो सकते अर्थात अब संकीर्ण विचार वालों का जीना मुश्किल है ।

मेटाउने गरीबका रगत निचोर्ने प्रथा
उदीयमान हुँदैछन् मनुष्यतामा मनुष्यता

यह पंक्ति उनकी कविता महोत्सव नामक कविता से उद्धृत है । कवि इस पंक्ति के माध्यम से समाज के उन पूंजीवादी वर्ग को संबोधित किया है जो गरीबों का खून चूसकर अपना रौब जमाते हैं । इस कविता में कवि ने क्रांति का शंखनाद फूंका है । खुलकर कहते हैं कि मनुष्य में अब मनुष्यता का उदय हो रहा है अर्थात जितने भी शोषक वर्ग हैं संभल जायें वरना संभलना मुश्किल होगा ।

उप–प्राध्यापक
या.ल. ना. विद्यापीठ
नेपाल संस्कृत विश्वविद्यालय

हिन्दी भाषा के प्रति घटता रुझान और मूल्य विघटन

डॉ. उर्मिला मिश्रा

राष्ट्र भाषा हिन्दी को सीखने तथा बोलने के प्रति घटता रुझान, भाषा ज्ञान के अभाव में हिन्दी साहित्य पठन-पाठन के प्रति बढ़ती अरुचि साहित्य में संचित आदर्शों, प्रेरणाओं एवं सिद्धांतो से अपरिचय - परिणामस्वरूप रिश्ते-नातो एवं सबन्धों में निहित ऊष्मा का ह्रास आदि ऐसे ज्वलंत प्रश्न है, जो सोचने को विवश करते है कि अपनी सभ्यता, संस्कृति और संस्कारो से रहित होने पर हमारे जीवन का क्या हश्र होने वाला है। हम सब जानते है, कि किसी भी देश, प्रान्त, समाज, परिवार एवं व्यक्ति का दिल तथा दिमाग, उसकी मातृभाषा में और राष्ट्र भाषा में ही धड़कता है, सांसे लेता है, तथा जीवित रहता है। उसकी अपनी भाषा में ही अनुभव एवं अनुभूतियाँ संचित रहती है, उसी भाषा में उसकी सभ्यता, संस्कृति एवं साहित्य रचित होता है। मनुष्य के सम्बद्ध रिश्ते-नाते, फलते-फूलते है। रिश्तों और सम्बन्धों की गरिमा भाषा के वाक्यों और शब्दों में अभिव्यक्त होती है, मानव जाति का उत्थान-पतन, आशा-निराशा, राग-द्वेष सबको भाषा ही समेटती है। मनुष्य की दिनचर्या को, गतिविधियों को, रहन-सहन के तौर-तरीको को मातृभाषा में ही अभिव्यक्ति मिलती है। हमारे पूरे जीवन के उतार-चढ़ाव को अपने दामन में समेटने वाली भाषा के ज्ञान और समझ को अगर हम भुला दे, तो हमारे पास हमारा इतिहास, हमारी प्रेरणाएँ, हमारे संबंधो तथा रिश्ते- नातों की महक, महत्व और गरिमा कहाँ से बचेगी ? बहुत दिनों से अपनी पीड़ा तथा बात कहने का मार्ग ढूँढ रही थी। डॉ. बीना राघव से दूरभाष पर अपना मन्तव्य स्पष्ट किया, विषय पर संक्षिप्त विचार-विमर्श किया, फिर अपनी बात कहने का बीड़ा उठाया। अपने कुछ साथियों एवं परिचितों से भी इस विषय पर राय मांगी। कमोबेश रूप में वे मुझसे सहमत प्रतीत हुई।

बन्धुओं कोई भी भाषा सीखना, पढ़ना बुरा नहीं है, अच्छी बात है, अग्रेजी भाषा में शिक्षा ग्रहण करना, पढ़ाई करना, व्यापार करना बुरा नहीं है, परन्तु अपनी भाषा के प्रति हिन् भाव रखना इतना अधिक घातक है जितना हम सोच भी नहीं पा रहे है, और इसका खामियाजा भुगत रहे है। अंग्रेजी शासन में दासता के दौरान अंग्रेजी बोलना, सीखना हमारी लाचारी थी, परन्तु उस वक्त हमारी आत्मा, अंग्रेजी या अंग्रेजो की गुलाम नहीं थी, तभी हम उस दासता से मुक्ति पा सके, परन्तु आज हम अंग्रेजी भाषा को विकास का जरिया मानने के बजाए, हम उससे अपना गौरव मान बैठे है, और अंग्रेजी को अपना गौरव मानने के कारण, हम अपनी सभ्यता, संस्कृति एवं संस्कारों में निहित संबंधों की, रिश्ते-नातों की, उनकी गरिमा की गर्माहट को भूल गए है, और संस्कारों को भुला देना उनके प्रति प्रतिबद्धता को भुला देना खुद को आरे से काटने जैसा काम है हम हिन्दी जानते हुए भी हिन्दी को बोलना अपनी तोहीन समझ रहे हैं टूटे-फूटे शब्दों में अंग्रेजी बोलकर स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं, और यही प्रवृति हमें संबंधों के निवर्हन से, रिश्ते- नातों की गरिमा की पहचान से एवं उनके प्रति स्वीकार भाव से दूर ले जा रही है।

आज हम सब व्यथित है, परेशान है, चिंतित है, कि हमारी अगली पीढ़ी रिश्तों को, सम्बन्धों को, उनकी मर्यादा को, गरिमा को नजर-अंदाज कर रही है, या भुला बैठी है, पर शायद हम भी कारणों को समझने की कोशिश नहीं कर रहे है, तह तक जा ही नहीं पा रहे, कुछ थोड़े से उदाहरण देकर मै अपनी बात कहने का प्रयास करुँगी। हिन्दी में या उससे निकली बोलियों और भाषाओं में अलग-अलग रिश्तों को पुकारने के लिए पृथक शब्द हैं, यथा पिता के बड़े भाई को ताऊजी कह कर बुलाना, छोटे भाई को चाचाजी कह कर बुलाना, पिता के पिता को दादाजी कह कर बुलाना हमें सिखाता है कि रिश्ते हमारे आदर के पात्र है, हमें उनकी मर्यादा का ध्यान रखना है, उनके प्रति अपने कर्तव्यों का ध्यान भी रखना है, जबकि अंग्रेजी में के केवल अंकल कहना पर्याप्त है जो किसी दायित्व बोध को हमारे भीतर नहीं भरता, इसी प्रकार मामा, मौसा, फूफा आदि शब्द भी हमें आत्मीयता का अहसास कराते है। उनके लिए भी अग्रेजो में अंकल सम्बोधन ही मिलता है। हमारी संस्कृति के अनुरूप ये संबोधन, हमे पिता के साथ इनकी समीपता का और आत्मीयता का बोध कराते है। हमें बिन कहे यह भी बताते हैं कि हमें इन सबके प्रति कितना सम्मान एवं प्रेम का भाव रखना है तभी हम इन्हें अपना आदर्श मान सकते है, या विनितता का भाव रख सकते है। हमें समझ में आता है कि ये रिश्ते हमारे पिता के लिए, माता के लिए, सम्माननीय है, तो हमारे लिए भी है।

इसी प्रकार हिन्दी भाषा में ताईजी, चाचाजी, बुआजी, मामीजी आदि शब्द हमारे भीतर रिश्तों के प्रति एक सुरक्षा का भाव, मधुरता का भाव भरते है, साथ ही दायित्व का भाव भी पैदा करते है। हमें अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर रहने का भी संदेश देती है, परन्तु अंग्रेजी भाषा में प्रयुक्त आंटी शब्द का प्रयोग हमारे मन में इतने सारे भाव बोध नहीं जगाता है। वहाँ सारे रिश्तों को एक ही डंडे से हांका जा रहा है। दादी, नानी जैसे शब्द हमें एक वयोवृद्ध, स्नेहिल सी मूर्ति से जोड़ देते है, और दिल में उनकी आकृति आशीर्वाद की मुद्रा में स्थापित हो जाती है।

इसी प्रकार एक महत्वपूर्ण शब्द और है, भाई- बहन, जिसमे ताऊ जी के बेटे-बेटी, चाचा के बेटे- बेटी, मामा-मौसी के बेटे-बेटी, बुआ के बेटे-बेटी सारे रिश्ते आते है, और हमें उनके साथ कैसा व्यवहार रखना है बताते है, परन्तु अंग्रेजी में कजन शब्द है जो किसी आत्मीयता का, समीपता का, आदर का बोध नहीं कराते, जबकि भाई शब्द या बहन शब्द उच्चरित होते ही, अर्थात प्रेम का ज्ञान करा जाते है, जबकि कजन शब्द इतना उड़ता हुआ सा शब्द है, कि आत्मीयता की उष्मा ही अनुभव नहीं होती । इसी प्रकार माँ, अम्मा, मौसी, आई आदि शब्दो में इतना प्रेम त्याग समर्पण समाया हुआ है, कि उच्चरित होते ही अपनी पूरी गरिमा को प्रस्तुत कर देता है । दूसरी ओर मोम, डैड आदि उच्चारण भारतीयता परिवेश में उस ऊष्मा को नहीं भरते । यही स्थिति नमस्ते, नमस्कार, प्रणाम या राम-राम आदि अभिवादन के लिए प्रयुक्त होने वाले शब्दों की है। ये शब्द हमें बताते है कि हम आपके सामने झुकते है, आप का वन्दन करते है, आपको आदर देते है, और जब ऐसा बोलकर हम झुकते है तो सामने वाले का हाथ आशीर्वाद की मुद्रा में उठता है स्पर्श मिलता है जो हमे एक सुरक्षा कवच दे जाता है। दूसरी ओर मन-मुटाव घट जाता है, नफरत पिघलती है। बोलचाल का सूत्र बना रहता है। दूसरी तरफ गुड मॉर्निंग या गुड इवनिंग शब्द वह अहसास नहीं देते। भारतीय परम्परा एक शब्द और अधिक महत्वपूर्ण है 'गुरु शिक्षक'। हमारे यहाँ गुरु का शिक्षक का 'दर्जा' भगवन से भी ऊपर कबीर, तुलसी, विवेकानन्द आदि ने माना है अथवा आस्था विश्वास आदर है इस सम्बन्ध के प्रति। परन्तु मैडम, मैम, सर आदि शब्दों का जब हम प्रयोग करते है तो देख रहे है आज शिक्षक के प्रति कैसी धारणा विकसित हो रही है ? जब शिक्षक के प्रति नमन की प्रवृति ही नहीं है तो क्या सीखेंगे उनसे ? कैसे उन्हें अपना आदर्श मानेंगे ? कैसे उनकी जीवन शैली अपनाने का प्रयास करेंगे ? हम आज हर दिन देख ही रहे है किशोर तक भरी कक्षा में शिक्षक-शिक्षिकाओं को चाकुओं से गोद रहे हैं। शिक्षिकाओं को उनके साथ तथा उनकी बेटियों के साथ रेप की धमकियाँ दे रहे हैं। किशोर-किशोरियों में अपराधीकरण की निरंतर बढ़ती प्रवृति का गहरा कारण आत्मीयता का समीपता का अहसास है जिसका एक मात्र उपाय संबंधों की समीपता एवं आत्मीयता की ऊर्जा उनमें प्रेषित करना है। अपनी सभ्यता संस्कृति तथा संबंधों की गरिमा को उनके भीतर प्रतिष्ठित करना कारगर समाधान हो सकता है। कृष्ण- सुदामा की मित्रता अगर लोगों में स्मरण रहेगी, तो मैत्री की गरिमा का अंदाज भी रहेगा।

अतः मेरा परिवारवालों से, बच्चों के संरक्षकों से, अध्यापकों से अनुरोध है कि आने वाली पीढ़ी को हिन्दी भाषा और उसके साहित्य के महत्त्व से परिचित कराये, न केवल परिचित कराएं अपितु प्रयास करे, कि जरा सा भी अपने झूठे अहम् को आहत होते देख कर बच्चे सामने वालों के सीने को छलनी करने में देर नहीं लगाते। इस अपराधीकरण का कारण खोखला गुरुर तो है ही, मजबूत संस्कारों के स्तम्भ का न होना भी है। हमारे पास अपने आदर्शों का कोई ऐसा आधार स्तम्भ है ही नहीं, जो हमें विचलन से रोक दे। आदर्श केवल बोलते रहने से या भाषणों से स्थापित नहीं होते, करके दिखाने से, या वैसे हालत प्रस्तुत करने से होते हैं। हम अधिक से अधिक अपनी भाषा के साहित्य को पढ़े, समझे, अपनी जीवन शैली में उसे उतारें, यही मानसिक और आत्मिक रूप से स्वस्थ रहने का तरीका है। जिंदगी दिखावे से नहीं चलती, चंद अंग्रेजी के शब्दों को बोलकर यह समझ लेना कि समस्त ज्ञान हमारे ही पास है, या स्तरीय केवल हम ही है, बड़ी भारी भूल है, अंग्रेजी बोलकर या उस मानसिकता को ओढ़कर अंग्रेजी न जानने समझने वाले रिश्तों को नीचा दिखाना, उनमे तुच्छता के भाव को भरना, उनकी तौहीन करना, नई पीढ़ी का शौक बन चुका है। वे नहीं जानते उनका यह आचरण सम्बन्धों की ऊष्मा को समाप्त कर अकेलेपन को भर रहा है, और यही अकेलापन आत्मघाती प्रवृति को भी जन्म दे रहा है।

इतने पर भी हम खुश है कि हमारे बच्चे अंग्रेजी बोल रहे, आगे बढ़ रहे है, परन्तु सच मानिए कि 80 प्रतिशत से अधिक लोग इस कड़ुए सच से, मन से दुःखी हैं कि संबंधों की गरिमा तो रही ही नहीं। यह तो एक हल्की सी झांकी भर है। हिन्दी नहीं जानते तो हिन्दी की पुस्तके कैसे पढ़ेंगे ? पढ़ेंगे नहीं तो हिन्दी साहित्य की पुस्तकों को कैसे पढ़ेंगे ? वहाँ निहित चरित्रों को, महापुरुषों को, उनके त्याग को, समर्पण को कैसे समझेंगे ? उनके आचार-विचार से परिचित कैसे होंगे ? अंग्रेजी माध्यम को अपनाने वाले बच्चों के लिए पंचतन्त्र की कहानियाँ :- नंदन, चम्पक, चंदामामा जैसी बाल पुस्तकों के कोई अर्थ नहीं। पढ़ने का प्रचलन समाप्त सा हो रहा, हम इस सत्य से परिचित नहीं है कि जब हम पढ़ते है तो हमारे सामने पुस्तकों में स्थित पात्र होते है, चरित्र होते है, घटनाएं होती हैं या हम होते है। बिलकुल एकांत होता है, और एकांत हमेशा सत्य होता है, वहाँ हमे किसी जीवित व्यक्तित्व से रूबरू नहीं होना पड़ता, वहाँ हमारा व्यक्तित्व किसी से नहीं टकरा रहा होता, वहाँ हम चरित्रों के सच को आत्मसात कर रहे होते हैं, उनके साथ हँस रहे होते हैं, या रो रहे होते है। हमारे मन की गांठे खुल रही होती है। हम पूर्णतः स्वीकार भाव की अवस्था में होते हैं अतः अहंकार भी पिघल रहा होता है। पथराई हुई संवेदना हिलने-डुलने लगती है। परिवार वालों की जिम्मेदारी है कि बच्चों के इर्द-गिर्द के लोगों को पढ़ने की प्रवृति की ओर मोड़े। अन्यथा तो पाठ्यक्रम के बोझ तले दबे रहेंगे या बचे-खुचे समय में अनर्गल बातें फोन से सीखते रहेंगे। संवेदनहीनता के अभाव में, स्वस्थ प्रेरणा के अभाव में, मजबूत संस्कार के आभाव में, हम

यह जानने की चेष्टा भी नहीं करेंगे कि माता-पिता, भाई-बहन या हमारे अन्य सम्बन्ध, यथा गुरुजन, पड़ोसी, मित्रगण किस पीड़ा से गुजर रहे हैं।

हिन्दी भाषा में हमारी दिनचर्या, रीति-रिवाज, रहन-सहन सब विधमान है। भाषा न जानने से इन रीति-रिवाजों को निभाना महज दिखावा बनकर रह जायेगा, या बोझ बन जायेगा, और बोझ कोई ढोना नहीं चाहता। अंग्रेजी बोलकर स्वयं को श्रेष्ठ समझने की प्रवृति तो जोर पकड़ ही रही है। शिक्षक को कक्षा में नाम लेकर पुकारना अंग्रेजी सभ्यता का हिस्सा है। पहले शिक्षिकाओं को बहनजी कहते थे, हिन्दी में अब बहन जी शब्द गाली जैसा हो गया है, क्योकि यह पिछड़ेपन का प्रतीक बन गया गया। कई स्कूलों में महोदया सम्बोधन दिया जा रहा है, जानकर, सुनकर अच्छा लगता है। हम हिन्दी को लेकर हीन भावना को नहीं, गौरव को महसूस करें। हिन्दी की 17 बोलियाँ:- गुजरती, राजस्थानी, हरियाणवी, पंजाबी, मराठी, बंगला, ब्रज, अवधी आदि प्रांतीय बोलियों को समझे। भाषा ही हमें उस प्रान्त तथा इलाके की दिनचर्या को पहनावे-उढ़ावे को समझाएगी। वहाँ के लोगों के रहने-सहने की सत्यता को तथा मजबूरियों को बताएगी। नहीं तो हम तो बाबूजी बनकर उनकी तकलीफो का लेश भाग भी नहीं समझ पाएंगे। उनके साहित्य के अध्ययन से ही हम राम-कृष्ण की गरिमा समझेंगे। आजादी दिलाने वालों के बलिदान को समझेंगे। विवेकानंद, रामकृष्ण, परमहंस महर्षि दयानन्द, गाँधी आदि महापुरुषों को समझेंगे। सुर, तुलसी, कबीर, मीरा, प्रसाद, निराला, महदेवी आदि के योगदान को समझेंगे। विविधता लिए हुए भारत देश में भाषा - हिन्दी भाषा हमें एकता के सूत्र में पिरोने का काम करेंगी। हमारा साहित्य जो कि हिन्दी भाषा तथा उसकी बोलियों में विरचित है, अनुभवों के विशाल भंडार को अपने भीतर समेटे हुए है।

आज मैं देखती हूँ कि अच्छे-अच्छे रहीस घरों में सुख-सुविधाओं के सब सामान मौजूद है, लाखों के फोन एवं कंप्यूटर मौजूद है, परन्तु छोटा सा भी पुस्तकालय घर में नहीं है। मासिक- वार्षिक, पत्र-पत्रिकाएँ घर में नहीं है। ऐसी पुस्तकें घर में नहीं है, जिन्हे सब पढ़कर बातचीत करने के मधुर क्षण ढूंढ सके, दो जने इकठ्ठे बैठकर किसी विषय पर बात कर सके। वसुधैव कुटुम्ब्क की संस्कृत को अपनाएंगे तो तब जब इस पंक्ति का अर्थ जेहन में होगा मित्रों मेरा ये लेख कुछ लोगो को भी अगर हिन्दी भाषा को पढ़ने समझने सिखने को प्रेरित कर सका, तो मै अपने प्रयास को सार्थक मानूंगी, क्योकि मैंने पढ़ा है कि 'चंद कोयले भी अगर सुलग उठे तो बाकि गीली लकड़ियाँ भी आग पकड़ लेती हैं।'

डॉ. सच्चिदानन्द जोशी, सदस्य सचिव, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के कार्यालय में एक शिष्टाचार भेंट के अवसर पर अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक एवं सलाहकार श्री विजय शर्मा ।

सुप्रीम कोर्ट के फैसलों का जल्द ही हिन्दी में भी होगा अनुवाद

मुख्य न्यायाधीश ने कहा कि मान लीजिए कोई व्यक्ति 30 साल तक मुकदमा लड़ता है और उसके बाद अंग्रेजी में आए फैसले में उसे घर-संपति से बेदखल कर दिया जाता है। अगर वह अंग्रेजी में दिए इस फैसले को पढ़ नहीं सकता और उसका वकील भी समय के आभाव में उसे पूरा फैसला समझाता नहीं है या फिर इसके लिए पैसे की मांग करता है तो यह स्थिति ठीक नहीं है।

जस्टिस गोगोई ने कहा कि हम यह प्रोजेक्ट जल्द शुरू करेंगे, पहले यह हिन्दी में होगा उसके बाद इसे क्षेत्रीय भाषाओं में शुरू किया जाएगा।

शिक्षक प्रकोष्ठ-गुरुग्राम द्वारा मेधावी छात्र एवं शिक्षक समारोह

हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं को समर्पित संस्था 'हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी' ने आज 30 सितंबर 2018 को गुरुग्राम के राजकीय महिला महाविद्यालय के सभागार में हिन्दी के मेधावी छात्र-छात्राओं और उनके शिक्षकों का सम्मान समारोह आयोजित किया। कार्यक्रम का शुभारंभ सरस्वती वंदन, दीप-प्रज्वलन और राष्ट्रगान से हुआ। मुख्य अतिथि सांसद, प्रसिद्ध समाज सेवक एवं लेखक जो संसदीय राजभाषा समिति के संयोजक भी हैं, डॉ. (प्रो.) प्रसन्न कुमार 'पाटसाणी' थे। विशिष्ट अतिथि के तौर पर स्टारैक्स यूनिवर्सिटी के उपकुलपति डॉ. अशोक दिवाकर, दैनिक जागरण समूह के वरिष्ठ उपाध्यक्ष श्री बसंत राठौड़, राजभाषा विभाग के अधिकारी श्री धनेश द्विवेदी, हरियाणा साहित्य अकादमी की पूर्व निदेशिका डॉ. मुक्ता और हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक थे।

इस समारोह में हरियाणा के गुरुग्राम और उसके आस-पास के 27 विद्यालयों के सी.बी.एस.ई. बोर्ड के 450 विद्यार्थियों और उनको हिन्दी विषय पढ़ाने वाले 50 शिक्षकों को सम्मानित किया गया। इन बच्चों ने अपनी दसवीं की बोर्ड परीक्षा में हिन्दी विषय में 90% से अधिक अंक प्राप्त किए थे जिन्हें अकादमी ने 'भाषा-दूत' सम्मान प्रदान किया गया। 'भाषा प्रहरी' का विशेष सम्मान तीन विद्यालय के उन मेधावी छात्रों का मिला जिन्होंने हिन्दी में 100 में 100 अंक प्राप्त किए थे। सनसिटी विद्यालय से सहज गुप्ता , मानव रचना इंटरनेशनल विद्यालय की छात्रा सोनल अग्रवाल और सी. सी. ए. के छात्र सक्षम गुप्ता को ये पुरस्कार मिले जिसमें 1100 -1100 रुपये की सम्मानख स्मृति चिह्न, सम्मान पत्र और पदक प्रदान किए गए। पुरस्कृत होने वाले विद्यार्थी सनसिटी स्कूल, मानव रचना इंटरनेशनल स्कूल, सलवान पब्लिक स्कूल, सी.सी.ए., शिवनादर और डी. ए. वी. , 14 सैक्टर, बालभारती, डी. पी. एस., श्याम पब्लिक स्कूल, हैप्पी मॉडल स्कूल, चिरंजीव भारती स्कूल, पालम विहार आदि के थे ।

प्रोफेसर प्रसन्न कुमार पाटसाणी ने अपने वक्तव्य में कहा कि विदेशी भाषाओं के मोह में न पड़कर अपनी भाषा और संस्कृति का संरक्षण करना चाहिए। आज अपनी भाषा का गौरव बढ़ाए जाने की आवश्यकता है। अकादमी इस दिशा में कारगर उपाय कर रही है। हिन्दी शिक्षकों में और शिक्षार्थियों में अपनी भाषा का गौरव बढ़ा रही है। पाठक जी ने कहा कि अंग्रेजी का वर्चस्व ऐसे ही बढ़ता रहा तो वो दिन दूर नहीं जब हम अपनी संस्कृति भी खो बैठेंगे। संस्कृति की जड़ें जितनी गहरी होंगी...स्वाभिमान का वृक्ष भी उतना ही फलेगा-फूलेगा।

समारोह का स्वागत वक्तव्य अकादमी की वरिष्ठ सलाहकार सुश्री सुरेखा शर्मा ने दिया । कार्यक्रम के अंत में शिक्षक प्रकोष्ठ, गुरुग्राम के सदस्यों को भी सम्मानित किया गया। इस अवसर पर शहर के बाल साहित्यकारों और कवि-लेखकों के साथ अभिभावकों ने भी कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। प्रमुख साहित्यकार घमंडीलाल अग्रवाल, मुकुल शर्मा, हरिंद्र यादव, कृष्णलता यादव, कृष्णा जैमिनी, सुनील शर्मा, कमलेश कौशिक, डॉ. सविता स्याल, किरन पांडेय, पूनम भल्ला, सुषमा भंडारी, पुष्पा जी आदि उपस्थित थे। हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की कार्यसमिति के सदस्य धनेश जी, हामिद जी , राजकुमार श्रेष्ठ, विजय शर्मा जी, विजय राय आदि भी आयोजन की सुंदरता और व्यवस्था सुदृढ़ करने पहुँचे।

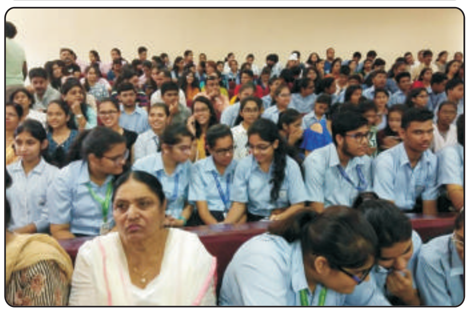

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग एवं हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में

गाँधी जी की 150वीं जयन्ती पर संगोष्ठी एवं काव्योत्सव का आयोजन

''गाँधी के भाषा चिन्तन में हिन्दी''

2 अक्टूबर, 2018 को गाँधी जी की 150वीं जयंती के अवसर पर केंद्रीय हिन्दी निदेशालय एवं वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग और हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के तत्वावधान में श्गाँधी के भाषा चिंतन में हिन्दी विषय पर विचार संगोष्ठी एवं सरस काव्योत्सव का आयोजन किया गया जिसमें दिल्ली, एन सी आर के विभिन्न विद्यालयों के लगभग 125 हिन्दी शिक्षक भी आमंत्रित थे। स्थान था– केंद्रीय हिन्दी निदेशालय। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रो अवनीश कुमार, अध्यक्ष, केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, मुख्य अतिथि भाषाविद् और केंद्रीय हिन्दी समिति के सदस्य प्रो. कृष्णकुमार गोस्वामी थे। कार्यक्रम का संयोजन एवम् संचालन हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक द्वारा किया गया । स्रोत वक्ताओं में प्रो. डॉ. रमेश तिवारी, डॉ. धनेश द्विवेदी, डॉ हरीश अरोड़ा, डॉ. राकेश पांडेय, डॉ बी. एल. गौड़ थे। इस अवसर पर सरोज शर्मा जी, सविता चड्ढा जी, मुक्ता जी, हामिद खान जी, मंजीत कौर, विजय राय, विजय शर्मा, राजकुमार श्रेष्ठ, डॉ. बीना राघव, नरेंद्र सिंह निहार, डॉ. भावना शुक्ल, सरिता गुप्ता आदि साहित्यकार भी उपस्थित थे। इस कार्यक्रम को दो सत्रों में विभक्त किया गया था। प्रथम सत्र में विचार संगोष्ठी में वक्ताओं ने गाँधी चिंतन में हिन्दी भाषा के महत्व पर प्रकाश डाला। दूसरे सत्र में रचनाशील शिक्षकों ने अपनी रचनाएँ सुनाईं जो हिन्दी, गाँधी, देशभक्ति पर आधारित, सामाजिक तथा नारी विषयक थीं।

राजभाषा विभाग के अधिकारी डॉ. धनेश द्विवेदी जी ने अपने विचार रखते हुए कहा कि अपनी भाषा को लागू करने की दृढ़तापूर्वक मानसिकता और इच्छा शक्ति की आवश्यकता है। इसीलिए गाँधीजी ने कहा था– हम सारा काम अपनी भाषा में कर सकते हैं, आवश्यकता केवल हिन्दी के प्रयोग करने की है।विदेशी भाषा से बच्चों पर बेजा जोर पड़ता है। किसी और भाषा में अपने बच्चे को पढ़ाना मैं इसे देश का दुर्भाग्य समझता हूँ। सही मायने में कोई भी देश तब तक स्वतंत्र नहीं कहा जाएगा, जब तक वह अपनी भाषा में काम नहीं करता है। प्रसिद्ध व्यंग्यकार डॉ. रमेश तिवारी जी ने कहा कि गाँधी जी देशवासियों से कहा करते थे– हम तो अपनी भाषा में ही काम करेंगे, नहीं आती तो सीखना होगा। भाषा भावाभिव्यक्ति का नाम है। गाँधी मूलतः गुजराती होते हुए भी राष्ट्रीय एकता को मद्देनजर रखते हुए हिन्दी को महत्व देते थे।

केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के निदेशक प्रो. अविनाश जी ने कहा कि गाँधी जी सबको एक सूत्र में बाँधने के लिए एक राष्ट्रभाषा का होना आवश्यक मानते थे। जो कि हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा हिन्दी ही हो सकती है।

अकादमी की साहित्यिक गतिविधियाँ

हिन्दी भवन, गाजियाबाद के संयुक्त तत्वावधान में

मेधावी छात्र एवं शिक्षक समारोह

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के वार्षिक आयोजनों की श्रंखला के अंतर्गत गाजियाबाद के 315 मेधावी छात्रों एवं उनके हिन्दी शिक्षकों का सम्मान आज दिनांक 28 अक्टूबर, 2018 को गाजियाबाद स्थित हिन्दी भवन सभागार में हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी एवं हिन्दी भवन समिति, गाजियाबाद के संयुक्त तत्वावधान में किया गया। कुल 315 विद्यार्थियों में से 4 विद्यार्थियों को 'भाषा प्रहरी सम्मान' दिया गया जिन्होंने दसवीं की बोर्ड परीक्षा में हिन्दी विषय में शत प्रतिशत अंक प्राप्त किये थे। शेष विद्यार्थियों को 'भाषा दूत सम्मान' दिया गया जिन्होंने 90 और उससे अधिक अंक प्राप्त किये थे। भाषा प्रहरी सम्मान स्वरुप विद्यार्थियों को मंचासीन अतिथियों द्वारा सम्मान पत्र, पदक और नकद सम्मान राशि देकर सम्मानित किया गया। इसी तरह भाषा दूत सम्मान स्वरुप विद्यार्थियों को सम्मान पत्र और पदक दिए गए तथा उनके हिन्दी शिक्षकों को स्मृति चिन्ह और अंगवस्त्र देकर सम्मानित किया गया। अपने-अपने विद्यालयों की पोशाक में उपस्थित छात्रों, उनके हिन्दी विषय के शिक्षकों और अभिभावकों से खचाखच भरा हुआ सभागार बहुत ही आकर्षक और शोभायमान था।

कार्यक्रम की शुरुआत मंचासीन अतिथियों द्वारा विधिवत रूप से सरस्वती प्रतिमा पर माल्यार्पण और दीप प्रज्वल्लित करके की गई। उसके बाद सभागार में उपस्थित सभी लोगों द्वारा सामूहिक राष्ट्रगान के बाद कार्यक्रम को आगे बढ़ाया गया। मंचासीन अतिथियों का हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के केन्द्रीय कार्यसमिति के पदाधिकारियों एवं शिक्षक प्रकोष्ठ, गाजियाबाद इकाई के पदाधिकारियों द्वारा शाल, पुष्प-गुच्छ और अंगवस्त्र और स्मृति चिन्ह देकर सम्मान किया गया। कार्यक्रम में अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका 'हिदुस्तानी भाषा भारती' के नवीन अंक का लोकार्पण भी किया गया।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि, उत्तर प्रदेश सरकार के खाद्य एवं रसद मंत्री, माननीय श्री अतुल गर्ग ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि जब भी हिन्दी भाषा और हिन्दी के हित के लिए कोई भी कार्यक्रम का आयोजन गाजियाबाद में करना हो तो वे उसके लिए हमेशा तत्पर रहेंगे और उनका पूरा-पूरा सहयोग रहेगा। वहीं हिन्दी भवन समिति, गाजियाबाद के महासचिव श्री योगेश गर्ग ने अपने वक्तव्य में कहा कि हिन्दी भवन की स्थापना हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए ही हुई है इसलिए भवन समिति हमेशा ही हिन्दी से सम्बंधित कार्यक्रमों का हमेशा ही स्वागत करती है। विशिष्ट अतिथि के रूप में मंचासीन देश की जानी-मानी कवियत्री सीता सागर जी ने हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की गतिविधियों और उसके उद्देश्यों पर चर्चा की, साथ ही उन्होंने अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक की कार्यशैली और हिन्दी के प्रति समर्पण की प्रशंसा की। कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे मॉरिशस सरकार के कला एवं संस्कृति मंत्रालय, हिन्दी संगठन के अध्यक्ष माननीय श्री सुरेश रामबरन जी ने अकादमी की गतिविधियों को बहुत सराहा और उन्होंने कहा कि हिन्दी हमारी पहचान है। हम विश्व की कोई भी भाषा सीख लें और उसमें दक्षता हासिल कर लें तो भी हम हिन्दुस्तानी के रूप में ही पहचाने जायेंगे। भाषा के बदल जाने से हमारी पहचान नहीं बदलती। इसीलिए हमें अपनी भाषा पर गर्व होना चाहिए। कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि, जाने-माने पत्रकार, साहित्यकार और उद्योगपति बी. एल. गौड़ जी ने अकादमी के आगामी किसी भी कार्यक्रम पर अपना पूरा सहयोग देने का वायदा किया। श्री गौड़ ने कहा कि अकादमी के अध्यक्ष की हिन्दी की वर्तमान स्थिति पर पीड़ा महसूस कर रहा हूँ और उन्होंने कहा कि वह अकादमी को हर संभव सहयोग देने को तैयार हैं। गाजियाबाद प्रकोष्ठ की ओर से डॉ तारा गुप्ता, सलाहकार द्वारा आये हुए अतिथिओं एवं अकादमी के केन्द्रीय समिति के सदस्यों का आभार व्यक्त किया गया।

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक ने स्वागत वक्तव्य में कहा कि यदि हमें हिन्दी की असल में सेवा करनी है तो पत्तों की जगह जड़ों में पानी डालना होगा और यह जड़ें विभिन्न विद्यालयों में अध्ययन करने वाले हमारे छात्र ही हैं। वर्तमान शिक्षा नीति के कारण ऐसा लगता है कि आने वाले कुछ दशकों के बाद हिन्दी के पाठक और श्रोता ढूँढने से भी नहीं मिलेंगे। हिन्दी दिवस, हिन्दी पखवाडा, अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलन आदि के माध्यम से हिन्दी भाषा को लेकर हम जो भी कुछ देख-सुन रहे हैं उसे देख कर ऊपरी तौर पर अवश्य ऐसा लगता है कि हिन्दी बहुत फल-फूल रही है पर जमीनी सच्चाई यह है कि हिन्दी की जड़ें सूख रही हैं। जब तक हिन्दी भाषा को रोजगार से जोड़ा नहीं जाता तब तक हिन्दी निरीह होने को मजबूर है। उन्होंने सरकार की शिक्षा नीति, विद्यालय प्रशासन के रवैयों पर और देश में दिनोंदिन बढ़ रही हिन्दी की दुर्दशा पर अपनी चिंता जाहिर की। समारोह का समापन अकादमी की सलाहकार सुश्री सीमा सिंह के धन्यवाद ज्ञापन से हुआ। इस भव्य आयोजन का कुशल और मोहक संचालन शिक्षक प्रकोष्ठ, गाजियाबाद की प्रभारी सुश्री कल्पना कौशिक द्वारा किया गया।

इस महत्वपूर्ण आयोजन में हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की केन्द्रीय समिति के सदस्य और शिक्षक प्रकोष्ठ, गाजियाबाद के पदाधिकारी उपस्थित थे जिनमें मुख्य सर्व श्री भूपेन्द्र सेठी, विजय कुमार शर्मा, हामिद खान, राजकुमार श्रेष्ठ, अमर नाथ गिरि, सुश्री सुषमा भंडारी, विदुषी शर्मा, वंदना शर्मा, नीरजा चतुर्वेदी, स्नेह भारती, नीलम शर्मा, सुशीला प्रसाद थे। कार्यक्रम सफल और सार्थक रहा तथा बच्चों और अध्यापकों के साथ-साथ अभिभावकों में भी कार्यक्रम को लेकर काफी उत्साह देखा गया।

रिपोर्ट

सार्क साहित्य सम्मेलन के नेपाली प्रतिनिधि मण्डल की इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, नई दिल्ली में शिष्टाचार भेंट

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के पदाधिकारियों सर्वश्री विजय कुमार शर्मा, श्री राजकुमार श्रेष्ठ, डॉ रमेश तिवारी, और अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक ने इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, नई दिल्ली के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानन्द जोशी से 6 अक्टूबर 2018 को दिल्ली में उनके कार्यालय में सार्क साहित्य सम्मेलन-2018 में पधारे हुए नेपाल के एक साहित्यिक प्रतिनिधि मंडल के साथ भेंट की।

नेपाल के साहित्यिक प्रतिनिधि मंडल में प्रमुख रूप से श्री भीष्म उप्रेती, श्री महेश पौडेल, श्री निमेश निखिल, सुश्री अनुपम रोशी, लगायत दार्जीलिंग निवासी मनप्रसाद सुब्बा, साहित्य अकादमी पुरस्कार से पुरस्कृत, उपस्थित थे।

नेपाल के प्रतिनिधि मंडल के साथ कई महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा हुई और साथ ही हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' के नवीनतम अंक जो कि विश्व हिन्दी सम्मेलन (मॉरीशस) विशेषांक है, को भी भेंट किया गया।

डॉ. जोशी ने नेपाली प्रतिनिधि मण्डल के माननीय सदस्यों का सद्भाव पूर्वक स्वागत किया और इंदिरा गांधी कला केन्द्र की विविध गतिविधियों एवं कला क्षेत्र की दिशा में किये जा रहे प्रयासों से अवगत कराया। इस अवसर पर दोनों ओर से भारत-नेपाल की साहित्यि विषयक पुस्तकों के अनुवाद कार्यों की सम्भावनाओं को तलाशने पर भी चर्चा हुई। नेपाली प्रतिनिधि मण्डल ने इस भेंट को बहुत महत्वपूर्ण और उत्साहवर्धक बताया।

रिपोर्ट

सार्क साहित्य सम्मेलन के नेपाली प्रतिनिधि मण्डल की केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली में शिष्टाचार भेंट

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के पदाधिकारियों सर्वश्री विजय कुमार शर्मा, श्री राजकुमार श्रेष्ठ, डॉ रमेश तिवारी, और अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक ने केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के निदेशक तथा वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, भारत सरकार, नई दिल्ली के अध्यक्ष प्रो. अवनीश कुमार जी से आज 6 अक्टूबर 2018 को दिल्ली में उनके कार्यालय में सार्क साहित्य सम्मेलन-2018 में पधारे हुए नेपाल के एक साहित्यिक प्रतिनिधि मंडल के साथ भेंट की।

नेपाल के साहित्यिक प्रतिनिधि मंडल में प्रमुख रूप से श्री भीष्म उप्रेती, श्री महेश पौडेल, श्री निमेश निखिल, सुश्री अनुपम रोशी, लगायत दार्जीलिंग निवासी मन प्रसाद सुब्बा, साहित्य अकादमी पुरस्कार से पुरस्कृत, उपस्थित थे।

नेपाल के प्रतिनिधि मंडल के साथ कई महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा हुई और साथ ही हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' के नवीनतम अंक जो कि विश्व हिन्दी सम्मेलन (मॉरीशस) विशेषांक है, को भी भेंट किया गया।

प्रो. अवनीश कुमार जी ने पूरी आत्मीयता से विदेशी प्रतिनिधि मंडल एवं अकादमी के पदाधिकारियों का स्वागत किया तथा स्मृति चिह्न और आयोग की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें भेंट की। प्रो. अवनीश जी ने नेपाली प्रतिनिधि मंडल और अकादमी के पदाधिकारियों को निदेशालय और आयोग के कार्यों और उद्देश्यों को विस्तार से समझाया।

हिन्दी के विरोध का
कोई भी आन्दोलन,
राष्ट्र की प्रगति में
बाधक है ।

-सुभाष चन्द्र बोस

निज भाषा उन्नति अहै,
सब उन्नति को मूल ।
बिन निज भाषा ज्ञान के,
मिटत न हिय के सूल ॥

-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

सम्मानित शिक्षिका की कलम से

डी.पी.एस. स्कूल, शारजाह (यू.ए.ई.) के मेधावी छात्र एवं शिक्षक हुए सम्मानित

मेधावी छात्र सम्मान की लड़ी की कड़ी में...

समस्त भारत की भाषाओं के संवर्धन के महाप्रयाण के रथ के सारथी सम्माननीय सुधाकर पाठक के पुण्य प्रयासों के फलस्वरूप शारजाह, यू.ए.ई स्थित मेधावी छात्रों को 'हिन्दुस्तानी भाषा दूत' सम्मान के लिए आवेदन भरने का अवसर प्राप्त हुआ। या यूँ कहिए कि मेरा विपुल सौभाग्यव नियति मुझे उस दिशा में ले गए।

आरंभ कुछ इस प्रकार हुआ कि इंटरनेट पर 'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' पत्रिका पढ़ उससे प्रभावित होकर उसमें अपनी कवितादि के प्रकाशन की इच्छा प्रबल हुई तो तुरंत स्वरचित कुछ कविताएँ छाँटकर आदरणीय को मेल भेज दी। आदरणीय से पढ़ने का अनुरोध करने के लिए वार्तालाप हुआ तो उनकी सहृदयता का परिचय मिला कि उनके द्वारा खाड़ी देश यू.ए.ई. में हिन्दी की स्थिति पर लिखने का अप्रतिम सुझाव प्राप्त हुआ। आदरणीय सुधाकर जी की प्रेरणा तथा अनुकम्पा से आलेख 'खाड़ी तट पर खड़ी हिन्दी' को वर्ष: 2, अंक:7 में 'विश्व हिन्दी सम्मेलन विशेषांक' में स्थान मिलना अचरज तथा आनंद का विषय रहा।

उसी दौरान आदरणीय सुधाकर जी से मेरे द्वारा शिक्षित छात्र-छात्राओं की हिन्दी में रुचि तथा उपलब्धियों पर भी चर्चा हुई और 'हिन्दुस्तानी भाषा दूत' के आवेदन का निमंत्रण मिलना ऐसा लगा जैसे सोने पर सुहागा। शारजाह स्थित डी.पी.एस. में हिन्दी अध्यापिका होने के नाते अपने विद्यालय के 90% से अधिक अंक हिन्दी में प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को यह सम्मान दिलाने की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। ईश्वरीय कृपा से समय-सीमा में ही सभी औपचारिकताएँ पूरी हो गईं। चूँकि 23 छात्र-छात्राओं के लिए 'हिन्दुस्तानी भाषा कादमी' द्वारा दिल्ली में आयोजित होने वाले भव्य समारोह में सम्मिलित होना तो संभव न था, अत: आदरणीय द्वारा सूचना प्राप्त हुई कि बालक दिल्ली नहीं आ सकते तो सम्मान स्वयं चलकर यू.ए.ई. पहुँच रहा है। हर्ष तथा आश्चर्य की सारी सीमाएँ अपनी रेखाओं का अतिक्रमण करने लगीं।

इस प्रक्रिया में प्रतिष्ठित पत्रिका 'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' के सह-संपादक तथा वरिष्ठ सहयोगी आदरणीय श्रीमान विजय शर्मा जी से भेंट का अवसर प्राप्त हुआ। आकांक्षा थी कि अपने विद्यार्थियों को यू.ए.ई. राष्ट्रीय दिवस के अवकाश के बाद प्रसन्नवदन यह पुरस्कार प्राप्त करते हुए देखने की, अत: मेडल तथा सर्टिफिकेट प्राप्त करने के उद्देश्य से पुत्र अनिरुद्ध गोयल के साथ मैं आदरणीय विजय जी से भेंट करने पहुँची। श्रीमान विजय शर्मा जी के साथ-साथ श्रीमती शर्मा जी भेंट एक सुखद अनुभूति हुई। अपने देश से दूर बैठे ही जैसे अपने माता-पिता के दर्शन हुए हों ऐसी भावपूर्ण प्रतीति हुई।उनकी सज्जनता तथा स्नेहमयी मधुर व्यवहार कहीं भीतर तक पैठ गया। आदरणीय शर्मा जी ने अपने साथ दुबई भ्रमण को आए बहुत से मित्र दंपत्तियों से परिचित करवाया। 'उम्र के अंक मात्र संख्या है' आज साक्षात दृष्टांत मेरे समक्ष उपस्थित था। उमंग, स्फूर्ति, जीवटता, उत्साह से भरपूर अनुभव की रेखाओं की छाँव में ज्ञान अर्जित करने का सुनहरा मौका मिला। इन वरिष्ठगण के मध्य इतना आशीषसमृद्ध अनुभव किया कि शब्दों में उसका उल्लेख कदाचित संभव न हो।

डॉ. आरती 'लोकेश' गोयल

आदरणीय शर्मा जी से छोटी से भेंट में जो स्नेह व आत्मीयता मिली, जीवन की कभी विस्मृत न कर पाने वाली वीथि है। कभी स्वप्न में ही पूरी होने वाली अभिलाषा आज सहसा यूँ साकार हो उठी जब मेरी सहभागिता में 'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' के वर्ष:2, अंक:7 का विमोचन दुबई के 'इम्पीरियल सुइट्स होटल' के मुख्य उपकक्ष में हुआ। मैं गदगद हो उठी जब श्रीमती शर्मा जी ने विद्यार्थियों के लिए किए गए एक अध्यापिका के कर्त्तव्यों कोपुरस्कृत करते हुए दुशाला ओढ़ाकर तथा ट्रॉफी देकर मुझे सम्मान प्रदान किया। एक छोटी-सी भेंट घड़ी भर में एक समारोह में परिणत हो गई। आदरणीय शर्मा जी के अन्य मित्रों द्वारा मुझे हमारे स्कूल डी.पी.एस. शारजाह के मेधावी छात्रों के मेडल तथा सर्टिफिकेट दिए गए। धन्य महसूस करना किसे कहते हैं आज पता चला। सभी विद्वतजनों के मध्य आनंद की सीमा न थी किंतु समय बहुत सीमित था। अत: आदरणीय शर्मा दम्पत्ति के आतिथ्य सत्कार के परम लाभ स्वरूप प्रात: कलेवर से उदर व उनके सान्निध्य से उर दोनों को संतृप्त कर हमने विदा ली।

मैं इस सम्मान के कितना योग्य थी यह तो नहीं जानती, परंतु सम्पूर्ण हृदय से भविष्य में भी विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान कर माँ हिन्दी की तथा मातृभूमि की सेवा कर इस महायज्ञ में यथायोग्य निज अंश अर्पण कर सकूँ यही महत्त्वाकांक्षा है।

आगामी आयोजन

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र की ओर से अकादमी द्वारा प्रकाशित नेपाली भाषा में अनुदित पुस्तक एवं कहानी संग्रह पर

पुस्तक परिचर्चा एवं लोकार्पण समारोह

'मॉरिशस के राजदूत महामहिम श्री जगदीश्वर गोवर्धन होंगे मुख्य अतिथि'

अकादमी का मानना है कि अनुवाद ही वह मार्ग है जो विभिन्न भाषाओं के बीच एक सेतु का कार्य करता है। एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुदित साहित्य न केवल इस माध्यम से अन्य भाषा के पाठकों तक पहुंचता है बल्कि उस भाषा की संस्कृति को भी प्रभावित करता है। अनुवाद के द्वारा क्षेत्रवाद और भाषाई कट्टरता को कम किया जा सकता है जिससे विभिन्न भाषाओं के बीच समरसता का वातावरण बनाता है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अकादमी हिन्दी के साहित्य को अन्य भारतीय भाषाओं में अनुदित साहित्य का प्रकाशन करती है। इसी क्रम में अकादमी की ओर से नेपाली भाषा में हिन्दी के कविता संग्रह को अनुदित करके प्रकाशित किया गया है। इसका अनुवाद नेपाली मूल के युवा लेखक एवं अनुवादक श्री राजकुमार श्रेष्ठ द्वारा किया गया है। एक अन्य पुस्तक 'प्रतिनिधि कहानियाँ' का प्रकाशन भी अकादमी द्वारा किया गया है। इसकी लेखिका वरिष्ठ कथाकार सुश्री सुरेखा शर्मा 'शांति' हैं जो शिक्षण क्षेत्र से जुड़ी रहीं है और वर्तमान में नीति आयोग में राजभाषा समिति की सदस्य हैं।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र द्वारा आयोजित होने वाले इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रुप में मॉरिशस के राजदूत महामहिम श्री जनार्दन गोवर्धन होंगे। विशिष्ट अतिथि के रूप में नेपाली दूतावास के सांस्कृतिक सलाहकार, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी, डॉ. एस सी वत्स, अध्यक्ष, विवेकानंद कॉलेज ऑफ प्रोफेसनल स्टडीस ने अपनी सहमति दी है। इसके अतिरिक्त नेपाल के कई साहित्यिक संस्थाओं के पदाधिकारियों एवं साहित्यकारों ने इस समारोह में भागीदारी करने की सहमति दी है। निश्चित रूप से यह कार्यक्रम दोनों देशों के बीच में साहित्यिक वातावरण को और मजबूत करेगा। इस प्रकार की सहमति बनी है कि भविष्य में इसी प्रकार के कार्यक्रम नेपाल में भी आयोजित किये जायें जिससे दोनों देशों के बीच में साहित्यिक रूप से और जुड़ाव बढ़े और नेपाली से हिन्दी और हिन्दी से नेपाली साहित्य का अनुवाद की प्रक्रिया और तेज हो।

नई दिल्ली स्थित मॉरिशस दूतावास में मॉरिशस के राजदूत महामहिम श्री जगदीश्वर गोवर्धन जी से अकादमी के पदाधिकारियों ने एक शिष्टाचार भेंट की और उन्हें आगामी कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया।

आगामी आयोजन

10 वीं कक्षा की परीक्षा में हिन्दी विषय में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले दिल्ली प्रदेश के

मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह
''भाषा प्रहरी एवं भाषा दूत सम्मान''

विजय कुमार शर्मा
सह सम्पादक

किसी राष्ट्र की सांस्कृतिक विरासत को बचाए रखने में भाषा का महत्वपूर्ण स्थान होता है । अगर भाषा को बचाना है तो हमें विद्यालयों के छात्रों में भाषा के प्रति सम्मान पैदा करना होगा जो विदेशी भाषाओँ की चकाचौध में धूमिल हो रहा है । इसके लिए सबसे महत्वपूर्ण सेतु शिक्षक हैं । अकादमी इसी भावना के साथ प्रत्येक वर्ष हिन्दी भाषा में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थिओं और उनको हिन्दी विषय पढ़ाने वाले शिक्षकों का सम्मान करती है ।

इसी क्रम में हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के सतत् क्रियाकलापों एवं महत्त्वाकांक्षी योजनाओं के अन्तर्गत सरकारी, सरकारी सहायता प्राप्त और निजी विद्यालयों के अध्ययनरत ऐसे छात्रों को एक भव्य समारोह में सम्मानित किया जाता हैं जिन्होंने केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की दसवीं कक्षा की परीक्षा में हिन्दी विषय में 90% से अधिक अंक प्राप्त किये हैं । ऐसे मेघावी छात्रों को 'भाषादूत सम्मान' से और हिन्दी विषय में शत-प्रतिशत अंक प्राप्त छात्रों को 'भाषा प्रहरी' सम्मान प्रदान किया जाता है। इस सम्मान में विद्यार्थियों को सम्मान-पत्र, अंग वस्त्रम्, स्मृति चिह्न के साथ-साथ शत प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को सम्मान राशि भी प्रदान की जाती है। इसके साथ ही विद्यार्थिओं को हिन्दी विषय पढ़ाने वाले शिक्षको को भी सम्मानित किया जाता है । अकादमी ने अपने उद्देश्यों का निर्वहन करते हुए इस वर्ष शिक्षक प्रकोष्ठों के माध्यम से गुरुग्राम (हरियाणा) और गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश) में भव्य समारोहों का आयोजन किया है ।

दिल्ली प्रदेश के लिए घोषित योजना में 160 विद्यालयों की ओर से 90% से अधिक अंक प्राप्त करने वाले लगभग 2000 छात्रों एवं उनको हिन्दी विषय पढ़ने वाले शिक्षकों की ओर से प्रविष्टियाँ प्राप्त हुई हैं (इनमें से कुल 33 विद्यार्थिओं ने हिन्दी विषय में 100 अंक प्राप्त किये हैं), इन सभी को सम्मानित किया जाना है। इस आयोजन में हम भाषा दूत और भाषा प्रहरी सम्मान प्रदान करते हैं जिसमें सम्मान पत्र, स्मृति चिन्ह के साथ-साथ शत प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले छात्रों को नकद पुरूस्कार भी प्रदान करते हैं । इन प्रविष्टियों के आधार पर एक भव्य सम्मान समारोह दिसम्बर माह के अंतिम सप्ताह में प्रस्तावित किया जाना है ।

अकादमी के आगामी आयोजन
विज्ञान विषय के शिक्षकों के लिए हिन्दी कार्यशाला

हिन्दी भाषा के माध्यम से ज्ञान एवं विज्ञान- तकनीकी को सरल करने एवं उपलब्ध पुस्तकों और अन्य साधनों से परिचित कराने के उद्देश्य से हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से दिल्ली के विभिन्न विद्यालयों के विज्ञान विषय का अध्यापन करने वाले शिक्षकों की एक कार्यशाला का आयोजन करने जा रही है । इन कार्यशालाओं के द्वारा विज्ञान के शिक्षकों को बताया जाएगा कि विज्ञान और तकनीकी क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में पठन-पाठन सामाग्री उपलब्ध हैं और हिन्दी के द्वारा भी इन विषयों की प्रभावशाली शिक्षा संभव है । इससे इस मिथक को टूटने में मदद मिलेगी कि इन विषयों की पुस्तकें हिन्दी में उपलब्ध नहीं हैं । इसके साथ ही इंटरनेट पर हिन्दी के विभिन्न टूल और तकनीकी से भी उनका परिचय कराया जाएगा । इस कार्यशाला को अकादमी के शिक्षक प्रकोष्ठ के सदस्यों के सहयोग से आयोजित किया जाएगा । ज्ञात हो कि अकादमी द्वारा गठित शिक्षक प्रकोष्ठ से लगभग 500 हिन्दी विषय के शिक्षक जुड़े हुए हैं । प्रकोष्ठ के सदस्य अपने-अपने विद्यालयों के विज्ञान विषय के शिक्षकों को इस कार्यशाला के लिए नामांकित करेंगे ।

यदि हमारा विश्वास अपनी भाषाओं पर से उठ गया है तो वह इस बात की निशानी है कि हमारा अपने आप पर विश्वास नहीं रहा । यह हमारी गिरी हुई हालत की निशानी है और जो भाषाएँ हमारी माताएँ बोलती हैं उनके लिए हमें जरा भी मान न हो तो किसी तरह की स्वराज्य की योजना, भले ही वह कितनी भी परोपकारी वृत्ति या उदारता से हमें दी जाए, हमें कभी स्वराज्य भोगने वाली प्रजा नहीं बना सकेगी ।

- राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान

मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार

हिन्दी संस्थान मार्ग, आगरा-282005, फोन : 0562-2530684
वेबसाइट : www.hindisansthan.org / www.khsindia.org

संक्षिप्त परिचय :

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा 1961 ई. में स्थापित एक स्वायत्त शैक्षिक संस्था है। इसका संचालन स्वायत्त संगठन केन्द्रीय हिन्दी शिक्षण मंडल द्वारा किया जाता है। संस्थान का मुख्यालय आगरा में स्थित है और इसके आठ क्षेत्रीय केन्द्र : दिल्ली, हैदराबाद, गुवाहाटी, शिलांग, मैसूर, दीमापुर, भुवनेश्वर तथा अहमदाबाद में हैं।

संस्था के मुख्य उद्देश्य-

■ भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुपालन में अखिल भारतीय भाषा के रूप में हिन्दी का विकास करते हुए इसके विकास और प्रसार की दृष्टि से उपयोगी शैक्षणिक पाठ्यक्रमों की प्रस्तुति एवं संचालन।

■ विभिन्न स्तरों पर गुणवत्तापूर्ण हिन्दी शिक्षण का प्रसार, हिन्दी शिक्षकों का प्रशिक्षण, हिन्दी भाषा और साहित्य के उच्चतर अध्ययन का प्रबंधन, हिन्दी के साथ विभिन्न भारतीय भाषाओं के तुलनात्मक भाषा वैज्ञानिक अध्ययन को प्रोत्साहन और हिन्दी भाषा एवं शिक्षण से जुड़े विविध अनुसंधान कार्यों का आयोजन। ■ अपने विभिन्न पाठ्यक्रमों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के लिए परीक्षा आयोजन तथा उपाधि वितरण। ■ संस्थान की प्रकृति एवं उद्देश्यों के अनुरूप उन अन्य संस्थाओं के साथ जुड़ना या सदस्यता ग्रहण करना या सहयोग करना या सम्मिलित होना, जिनके उद्देश्य संस्थान के उद्देश्यों से मिलते-जुलते हों और इन समान उद्देश्यों वाले संस्थानों की संबद्धता प्रदान करना। ■ समय-समय पर नियमानुसार अध्येतावृत्ति (फैलोशिप), छात्रवृत्ति और पुरस्कार, सम्मान पदक की स्थापना कर हिन्दी सं संबंधित कार्यों को प्रोत्साहन आदि।

संस्थान के कार्य-

■ **शिक्षणपरक कार्यक्रम :** (1) विदेशी विद्यार्थियों के लिए हिन्दी शिक्षण, (2) हिन्दीतर राज्यों के विद्यार्थियों के लिए अध्यापक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम, (3) नवीकरण एवं संवर्द्धनात्मक कार्यक्रम, (4) दूरस्थ शिक्षण कार्यक्रम (स्ववित्तपोषित), (5) जनसंचार एवं पत्रकारिता, अनुवाद अध्ययन और अनुप्रयुक्त हिन्दी भाषाविज्ञान के सांध्यकालीन पाठ्यक्रम (स्ववित्तपोषित)

■ **अनुसंधानपरक कार्यक्रम :** (1) हिन्दी शिक्षण की अधुनातन प्रविधियों के विकास के लिए शोध, (2) हिन्दी भाषा और अन्य भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक व्यतिरेकी अध्ययन, (3) हिन्दी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में आधारभूत एवं अनुप्रयुक्त अनुसंधान, (4) हिन्दी भाषा के आधुनिकीकरण और भाषा प्रौद्योगिकी के विकास के उद्धेश्य से अनुसंधान, (5) हिन्दी का समाज भाषा वैज्ञानिक सर्वेक्षण और अध्ययन, (6) प्रयोजमूलक हिन्दी से संबंधित शोधकार्य। अनुसंधानकरक कार्यों के दौरान द्वितीय भाषा एवं विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के लिए उपयोगी शिक्षण सामग्री का निर्माण।

■ **शिक्षण सामग्री निर्माण और भाषा विकास :** (1) हिन्दीतर राज्यों और जनजाति क्षेत्र के विद्यालयों के लिए हिन्दी शिक्षण सामग्री निर्माण, (2) हिन्दीतर राज्यों के लिए हिन्दी का व्यतिरेकी व्याकरण एवं द्विभाषी अध्येता कोशों का निर्माण, (3) विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण पाठ्यपुस्तकों का निर्माण, (4) कंप्यूटर साधित हिन्दी भाषा शिक्षण सामग्री का निर्माण, (5) दृश्य-श्रव्य माध्यमों से हिन्दी शिक्षण संबंधी पाठ्यसामग्री का निर्माण, (6) हिन्दी तथा हिन्दीतर भारतीय भाषाओं के द्विभाषी/त्रिभाषी शब्दकोशों का निर्माण।

संस्थान के प्रकाशन : हिन्दी भाषा एवं साहित्य, भाषाविज्ञान, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, तुलनात्मक एवं व्यतिरेकी अध्ययन, भाषा एवं साहित्य शिक्षण, कोश विज्ञान आदि से संबद्ध विभिन्न विषयों पर उपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन। अब तक 150 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। विभिन्न स्तरों एवं अनेक प्रयोजनों की पाठ्यपुस्तकों, सहायक सामग्री तथा अध्यापक निर्देशिकाओं का प्रकाशन। त्रैमासिक पत्रिका- 'गवेषणा', 'मीडिया' और 'समन्वय पूर्वोत्तर' का प्रकाशन।

पुस्तकालय : भाषाविज्ञान, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, भाषा शिक्षण और हिन्दी साहित्य के विभिन्न विषयों की पुस्तकों के विशेषीकृत संग्रह की दृष्टि से हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ पुस्तकालयों में से एक। लगभग एक लाख पुस्तकें। लगभग 75 पत्र-पत्रिकाएँ (शोधपरक एवं अन्य)

संस्थान से संबद्ध प्रशिक्षण महाविद्यालय : हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण के स्तर को समुन्नत करने तथा पाठ्यक्रम में एकरूपता लाने के उद्देश्य से उत्तर गुवाहाटी (असम), आइजोल (मिजोरम), मैसूर (कर्नाटक), दीमापुर (नागालैंड) के राजकीय हिन्दी शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों को संस्थान से संबद्ध किया गया है।

योजनाएँ : ■ भारतीय सांस्कृतिक केन्द्र, कॉलेजों में सिंहली विद्यार्थियों के लिए केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के पाठ्यक्रम की 2007-08 से शुरूआत। ■ अफगानिस्तान के नान्गरहर विश्वविद्यालय (जलालाबाद) में संस्थान द्वारा निर्मित बी.ए. का पाठ्यक्रम 2007-08 से प्रारम्भ। ■ विश्व के कई अन्य देशों (चेक, स्लोवानिया, यू.एस.ए., यू.के., मॉरीशस, बेल्ज़ियम, रूस आदि) के साथ शैक्षणिक सहयोग और हिन्दी पाठ्यक्रम संचालन के संबंध में संवाद जारी। ■ हिन्दी के बहुआयामी संवर्धन के लिए हिन्दी कॉर्पोरा परियोजना, हिन्दी लोक शब्दकोश परियोजना, भाषा-साहित्य सी.डी. निर्माण परियोजना, पूर्वोत्तर लोक साहित्य परियोजना तथा लघु हिन्दी विश्वकोष परियोजना पर कार्य।

-डॉ. कमल किशोर गोयनका
उपाध्यक्ष, के.हिं.शि.मं.

-डॉ.नन्द किशोर पाण्डेय
निदेशक

ई-मेल : kkgoyanka@gmail.com

RNI No. : DELHIN/2017/73904

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित संस्था)

पंजीकृत कार्यालय : 3675, राजा पार्क, रानी बाग, दिल्ली-110034
दूरभाष : 09873556781, 09968097816
E-mail : info@hindustanibhashaakadami.com
hindustanibhashabharati@gmail.com
Website : www.hindustanibhashaakadami.com